चकमक

दिसम्बर, 2004 | बाल विज्ञान पत्रिका | रु. 10.00

भटा और नागदेवता

एक बार, बाड़े में दो भटे (बैंगन) जन्म लिए। वे दोनों पति-पत्नी थे।

एक दिन भटे के नीचे से नाग देवता गुज़र रहे थे। भटे ने कहा- 'कहाँ जा रहे हो लामता (नाग देवता)!'

नागदेव बोले-'चुपचाप झूलते रहो! कहीं गाँव वालों ने देख लिया तो भक भिक (लाठी) मार के बेड़ा में टाँग देंगे। और मुर्गियाँ देखेंगी तो कुटकुटाने लगेंगी। इसलिए मैं चुपचाप जा रहा हूँ। आपसे बातचीत नहीं कर रहा हूँ। आप तो मेरी समस्या जानते हैं।'

बस्तर की यह लोककथा हमने मशहूर लोक चित्रकार दुर्गाबाई से सुनी। इसका चित्रांकन भी उन्होंने ही किया है।

दोस्तो,

नया साल आने वाला है। कैसा रहा तुम्हारा बीता साल! अच्छा एक बात बताओ! हमारे साल का अच्छा होना क्या सिर्फ इस बात पर निर्भर करता है कि वह साल हमारे अपने लिए कैसा रहा? क्या हमारे साल के अच्छे या बुरे हाने का ताल्लुक हमारे आसपास के अच्छे और बुरे होने से होता होगा?

हमारे घर, मुहल्ले, हमारे देश के हिस्से या हमारी दुनिया के कुछ देश, जहाँ के लोग परेशान होंगे! उनके लिए क्या नया साल, क्या पुराना साल! फिर भी ये कुछ ऐसे वक्त होते हैं जब हम बेहतरी के सपने देखते हैं। और एक नई शुरूआत कर पाते हैं। तमाम निराशाओं के बावजूद कई ऐसी चीज़ें भी हैं जो उम्मीदें जगाती हैं।

इसी अंक में तुम पढ़ोगे। एक सरकारी अस्पताल के डाक्टर ने एड्स पीड़ित, एक अकेले बच्चे की परवरिश का ज़िम्मा लिया। कहा जाता है कि अगर कोई कुछ अलग करता है तो साथ काम करने वाले लोग उसकी मदद नहीं करते। पर इस बच्चे के लिए पूरा अस्पताल जिस तरह जुटा, वह बेमिसाल है। काश हमारे सारे सरकारी अस्पतालों को ये संक्रमण लग जाए! ब्रेल पर लेख लिखने के दौरान हम कई लोगों से मिले। उनकी राय है कि ऐसे लोग जो आँखों से नहीं देख सकते, के प्रति लोगों के रवैये में सकारात्मक बदलाव आया है। इस अंक में भोपाल गैस त्रासदी की खबर पढ़ोगे। बीस साल से कितने ही लोग मुसीबत झेल रहे लोगों का साथ दे रहे हैं। कुछ भी हो मदद के लिए आए हाथ मुसीबतें उगाने वाले हाथों से काफी ज्यादा हैं। इसलिए हमें हताश होने की जरूरत नहीं है।

हमारा एक बिल्कुल छोटा-सा दोस्त है ... हर्ष ! मेरा पन्ना का नया सदस्य! उसने अपने घर के बारे में लिखा है। वो पापा से बहुत डरता है। शायद मेडम से भी। क्योंकि वो दोनों पीटते हैं। हाँ और वो दोनों को प्यार भी बहुत करता है। मैंने जब कहा मुझे तो जो लोग मारते थे वे बहुत बुरे लगते थे। तो कहता है "जानते हैं जो लोग आपको जितना मारते हैं वो आपसे उतना ही प्यार करते हैं।" उसने पापा और मेडम का इतने करीने से बचाव किया कि बस पूछो मत! तुम सबमें हमारे आने वाले अच्छे दिन रहते हैं। हर्ष की इतनी मीठी चालाकी से कौन ये यकीन नहीं कर लेगा कि अभी कुछ भी नहीं बिगड़ा है। हमारी दुनिया इतनी भी बुरी नहीं है।

उम्मीद है नए साल में हमारा ये विश्वास और बढ़ेगा।

● चकमक

चकमक

मासिक बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष 20 - अंक-6 दिसम्बर 2004

सम्पादन
विनोद रायना
अंजलि नरोना
शशि सबलोक
टुलटुल विश्वास
सुशील शुक्ल

वितरण
कमल सिंह
अनिल लोखण्डे
मनोज निगम

सहयोग
कविता सुरेश
राकेश खत्री
शिवनारायण गौर

विज्ञान परामर्श
सुशील जोशी

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता

एकलव्य
ई-7/एचआईजी-453,
अरेरा कॉलोनी,
भोपाल-462 016 (म.प्र.)
फोन - 2463380
eklavyamp@mantrafreenet.com

कवर का कागज़ - यूनीसेफ के सौजन्य से

चंदे की दरें

एक प्रति	:	10.00 रुपए
छमाही	:	50.00 रुपए
वार्षिक	:	100.00 रुपए
दो साल	:	180.00 रुपए
आजीवन	:	1000.00 रुपए

सभी में डाक खर्च हम देंगे।

चंदा, मनीऑर्डर/ड्राफ्ट/चैक से एकलव्य के नाम पर भेजें। भोपाल से बाहर के चैक में बैंक चार्ज 30.00 रुपए अतिरिक्त जोड़ें।

एकलव्य का प्रकाशन

चकमक

बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष - 20 अंक - 6 दिसम्बर 2004

क्या-क्या है इस अंक में

कहानी

अहीर और जुगनू 8

काबायान और जादुई चिड़िया 34

विशेष लेख

उँगलियों से पढ़ाई... 3

प्याज़ के छिलके 11

हुआ यूँ कि... 24

दृष्टिहीनों के लिए ... 32

कविताएँ

कुतुबमीनार 22

टेढ़ा कौन 29

मज़ेदार तथ्य

क्या आप जानते हैं.. 20

तुम बनाओ

अनोखी स्लेट 23

हर बार की तरह

इस बार की बात 1

इस अंक में 2

मेरा पन्ना 12

चित्र पहेली 18

चकमक समाचार 26

माथापच्ची 30

पुस्तक समीक्षा 33

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा और जनविज्ञान के क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यावसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

उँगलियों से पढ़ाई, उँगलियों से लिखाई

जो जीता वही सिकन्दर! यानी असल उस्ताद वही है जो तमाम मुश्किलों की पीठ पर पाँव रखकर अंज़ाम तक पहुँचे। ऐसे कुछ लोग तो अखबार, टीवी, किताबों के ज़रिए नज़र में आ जाते हैं। हेलन केलर और लुई ब्रेल ऐसे ही दो नाम हैं। हेलेन न सुन सकती थीं न देख पाती थीं। उन्होंने कुछ चौदह किताबें लिखीं, सैंकड़ों भाषण दिए, फिल्म में काम किया, और तो और प्रथम विश्व युद्ध के घायल सिपाहियों के लिए भी काम किया। लुई ने 15 साल की उम्र में ब्रेल लिपि बनाई। इसने तमाम दृष्टिहीनों के सामने किताबों की दुनिया खोल दी। यह लेख उन करामातों की कहानी है जो कहती हैं कि आँखों से दुनिया को न देख पाने से जीवन नहीं रुक सकता है।

ऐसे बहुत से उस्ताद हमारे आसपास भी रहते हैं। जो तमाम शारीरिक कमियों के बावजूद सभी काम बराबरी से करते हैं। फिर भी अकसर इन्हें बेचारगी से देखा जाता है। या नज़रअंदाज़ किया जाता है। शारीरिक कमी से उपजी परेशानियों की तुलना में बेचारगी भरा व्यवहार उन्हें ज़्यादा तोड़ता है। वे समाज से बस इतना ही चाहते हैं कि वह उन्हें आत्मनिर्भर बनने में मदद करे।

पिछले दिनों हम एक ऐसे स्कूल में गए जहाँ के बच्चे व शिक्षक आँखों से नहीं देख सकते हैं। इमारत 1960 की बनी है। और इतनी जर्जर है कि उसका नाम ही 'टूटा भवन' पड़ गया है। तमाम कूड़ा करकट, ऊँची-नीची सीढ़ियों को पार करके एक खण्डहर-सी जगह आती है। यहीं यह स्कूल चलता है।

क्या हम उन्हें यही 'सुविधाएँ' दे सकते हैं?

लुई ब्रेल

लुई ब्रेल

लुई फ्रांस के एक छोटे-से शहर में रहता था। उसके पिता चमड़े की जीन बनाते थे। पिता के पास चमड़ा काटने के कई औज़ार थे। लुई को यूँ चमड़ा कटते देखना बहुत अच्छा लगता। पिता उसे औज़ारों को छूने नहीं देते थे। एक दिन पिता चमड़ा खरीदने गए। माँ सब्ज़ियाँ तोड़ रही थी। कुछ देर इधर-उधर मटरगश्ती के बाद लुई वर्कशॉप जा पहुँचा। अच्छा मौका था। सो उसने एक नुकीला-सा सूजा उठाया और चमड़े पर लिखने लगा। इतने में सूजा फिसला और सीधे उसकी दाईं आँख में जा लगा। वह दर्द के मारे चीख उठा। माँ दौड़ी-दौड़ी आई और आँख धोकर पट्टी बाँध दी। कुछ देर बाद उसकी आँख में तेज़ खुजली हुई। उसने ज़ोर से रगड़ा। धीरे-धीरे उसकी आँखों के सामने अँधेरा छाने लगा। दाईं आँख से संक्रमण बाईं आँख में भी फैल गया। कुछ दिनों बाद लुई को लगा जैसे किसी ने उसकी आँखों के सामने पर्दा डाल दिया हो।

तीन साल का नन्हा लुई इस हादसे को क्या समझता। वह पूछता, "सूरज कब निकलेगा?" पर कोई उसे क्या समझाता। लुई के माता-पिता उसे हर काम खुद करने के लिए उकसाते। उसे चमड़ा पॉलिश करना सिखाया। वह देख तो न सकता पर उँगलियों से उसकी चिकनाहट को महसूस कर ही सकता था। वह घर के कामों में भी मदद करता।

यह बात लगभग दो सौ साल पुरानी है। तब समझा जाता था कि पढ़ने का एकमात्र तरीका शब्दों को देखना ही है। लेकिन लुई कुछ और सोचता था। उसने अपने दोस्तों के साथ स्कूल जाना शुरू कर दिया। पढ़ाई में वह किसी से कम न था। उसकी याददाश्त काफी तेज़ थी। सुनी हुई बातों से ही वह सीखता। गणित भी मौखिक ही कर लेता। लेकिन इन सब के लिए उसे दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता। वह जान गया था कि किताबों में जानकारी भरी पढ़ी है। वह उन्हें खुद पढ़ना चाहता था।

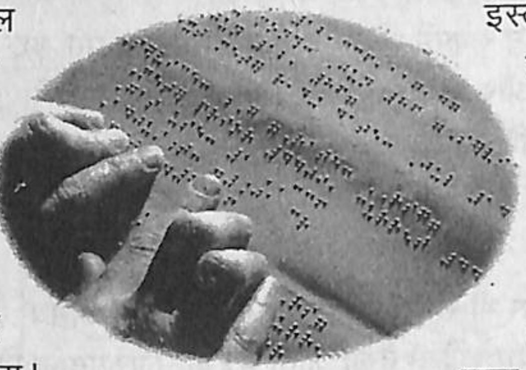

लुई जब दस बरस का था, तब उसे पेरिस के अँधे बच्चों के स्कूल के बारे में पता चला। उसने अपना बोरिया बिस्तर बाँधा और ज़ोर-शोर से नए स्कूल में जा पहुँचा। वहाँ उसे कुछ किताबें मिलीं। इन किताबों में कागज़ पर उभरे हुए बड़े-बड़े अक्षर थे। इससे किताबों का आकार बहुत बड़ा हो जाता था। ऊपर से ये इतनी महँगी थीं कि इन्हें खरीदना बस के बाहर था। स्कूल में कुल जमा 14 किताबें थीं जिन्हें लुई ने पढ़ डाला था।

लुई शब्दों को छूकर महसूस तो कर पाता लेकिन बड़े अक्षरों के कारण एक वाक्य पढ़ने में काफी वक्त लगता था। वाक्य के अंत तक पहुँचते-पहुँचते शुरू का हिस्सा भूल जाता। लुई सोचता रहता, कोई तो तरीका होगा जिससे शब्दों को छूकर भी तेज़ी से पढ़ा जा सकता।

लुई एक बेहद जुगाड़ू और तेज़ बच्चा था। उसने छोटी उम्र में ही चेलो और ऑर्गन बजाना सीख लिया था। वह अकसर पेरिस के गिरजाघरों में बजाता। इससे उसका आत्मविश्वास भी बढ़ता और कुछ कमाई भी होती। इस दिमाग पर अब एक तेज़ी से पढ़ सकने वाली लिपि बनाने की धुन सवार हो गई थी।

एक दिन उसे इसका तोड़ मिल ही गया। अक्षरों का एक तरह का कोड था जिसे रात में बिना रोशनी के भी पढ़ा जा सकता था। इसे फ्रांस की सेना इस्तेमाल करती थी। इससे रात में संदेश पढ़े जाते थे। 12 बिन्दियों (.) और लकीरों (-) से बने ये कोड कागज़ पर उभरे हुए थे। उँगलियाँ फेरकर इन्हें पढ़ा जा सकता था।

बड़ी-बड़ी किताबों में बड़े-बड़े उभरे शब्द पढ़ने से तो यह तरीका कहीं बेहतर था। लुई को इसमें सुधार की बहुत गुंजाइश दिखी। वह इन उभरी हुई बिन्दियों की संख्या कम करना चाहता था।

छुट्टियों में वह घर पर भी इसी में भिड़ा रहा। उसके दिमाग में एक आइडिया कौंधा। उसने पिता की वर्कशॉप से एक भोथरा सूजा लिया। और केवल छह बिन्दियों से पूरी वर्णमाला बना ली।

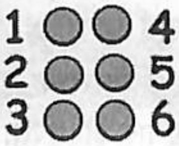

उसने सूजे से एक कागज़ पर दाईं से बाईं ओर एक वाक्य लिखा। कागज़ को पलटा। और बाईं से दाईं तरफ उँगली फेरते हुए उसे पढ़ने लगा। उतनी ही तेज़ी से जैसे कोई देखकर पढ़ता है। यह वही ब्रेल लिपि है जिसे आज दुनिया भर में इस्तेमाल किया जा रहा है। लुई उस वक्त 15 साल का था। 1829 में उसने ब्रेल में पहली किताब लिखी। कुछ साल बाद 1837 में उसने गणित और संगीत के लिए भी चिन्ह बनाए। आज लगभग हर देश में ब्रेल का उपयोग किया जा रहा है। किसी भी भाषा को ब्रेल में लिखा जा सकता है।

कभी जिस सूजे ने आँखें छीन ली थी, लुई ने उसे ही पढ़ने का औज़ार बनाया।

ब्रेल कैसे सीखी जाए?

ब्रेल कोई भाषा नहीं, एक लिपि है। यानी हम ब्रेल में बोल नहीं सकते। लेकिन किसी भी भाषा को ब्रेल में लिखा जा सकता है। इसके लिए उस भाषा की जो भी लिपि है उसकी वर्णमाला के लिए ब्रेल में चिन्ह बनाने होंगे। जैसे हिन्दी व अंग्रेज़ी के लिए ब्रेल के चिन्ह हैं-

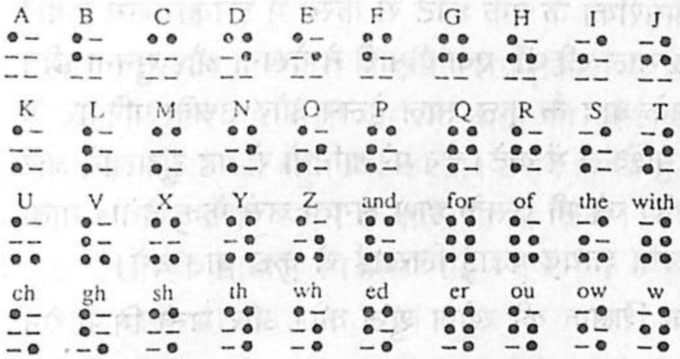

क्या पहचान पाए यह क्या लिखा है। यह है BRAILLE

तुम ब्रेल में अपना नाम लिखने की कोशिश करो। यह है चकमक

ब्रेल में लिखना

ब्रेल लिखने के लिए कई तरह की स्लेटों का इस्तेमाल किया जाता है। आम तौर पर इस्तेमाल होने वाली स्लेट में कुछ आड़ी लाइनें होती हैं। इन लाइनों में लगभग 18 से 37 तक खाने होते हैं। इन्हीं खानों में स्टाइलस (एक छोटा-सा सूजा) गड़ाकर अक्षर उभारते हैं। एक खाना एक अक्षर उभारता है। इससे कागज़ की दूसरी ओर बिन्दु उभर जाते हैं। हर शब्द के बाद एक खाना छोड़ दिया जाता है। हर खाने में दाईं तरफ की खड़ी लाइन को 1 2 3 और बाईं तरफ की खड़ी लाइन को 4 5 6 नम्बर का माना जाता है।

1● ●4
2● ●5
3● ●6

ब्रेल लिखने के लिए स्लेट के ऊपर कुछ मोटा कागज़ रखा जाता है। ब्रेल उर्दू लिपि की तरह दाईं से बाईं तरफ लिखी जाती है। लिखने के बाद कागज़ को पलटकर उभरी हुई बिन्दियों पर बाईं से दाईं ओर पढ़ा जाता है।

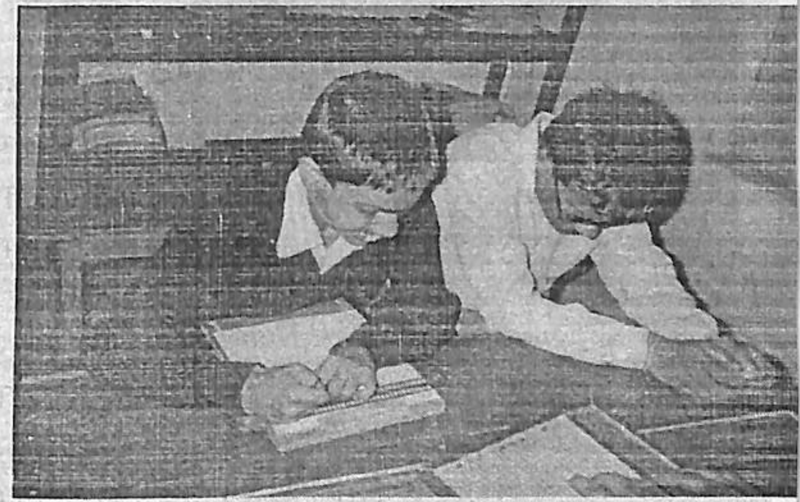

ये हैं प्रियेश गुप्ता। इनकी स्लेट तो आम स्लेटों जैसी है। लेकिन उसके साथ एक पट्टी है जिसपर खाने बने हुए हैं। इनमें स्टाइलस से लिखा जाता है।

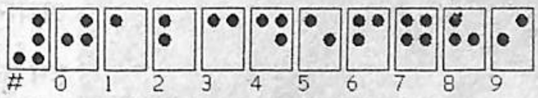

ये हैं ब्रेल में लिखे अंक।

अच्छा यह तो बताओ कि क्या तुम अपना नाम लिख पाए? अगर मज़ा आया तो एक खेल खेला जा सकता है। ब्रेल में एक पूरा वाक्य लिखो। फिर इसके सारे शब्दों को अलग कर लो। और कमरे में अलग-अलग जगह पर इनको छिपा दो। देखो कौन सबसे पहले इन शब्दों को जोड़कर एक वाक्य बनाता है?

हम किसी से कम नहीं...

हेलन केलर
1880-1968

ब्रेल में किताब पढ़ती हेलन। (1902)

ये हैं हेलन केलर।

1880 में अमरीका के एक छोटे से कस्बे में इनका जन्म हुआ। जब वो डेढ़ साल की थीं, एक बीमारी ने देखना और सुनना छीन लिया। इसके बाद के कुछ साल हेलन और उसके परिवार के लिए बहुत मुश्किल में कटे। इन परेशानियों से वह झुँझलाने और खीजने लगी। जो भी उसके हाथ लगता उसे फेंक देती। माता पिता को लगा शायद पढ़ाई लिखाई से कुछ बात बने।

उन्होंने एक शिक्षक की खोज शुरू की। और उन्हें मिली ऐन सिलुवैन।

शतरंज की बिसात पर हेलन और ऐन सिलुवैन। चाल हेलन की है।

ऐन सिलुवैन

ऐन जब पहली बार हेलन से मिली तब वह सात साल की थी। वह हेलन के लिए एक गुड़िया लाई थी। उसने उँगली से हेलन के हाथ पर लिखा Doll (गुड़िया)। हेलन ने ऐन के हाथ पर वैसे ही Doll लिख दिया। ज़ाहिर है हेलन ने सिर्फ हथेली पर हुई ऐन की उँगली की हरकत को ही पकड़ा था। बिना उसका मतलब समझे! जल्दी ही यह एक अच्छा खासा खेल बन गया। इसी नकली खेल ने हेलन को कई शब्द सिखा दिए। पर इन शब्दों के अर्थ समझाना खेल न था। इसके लिए ऐन को काफी मेहनत करनी पड़ी। हेलन के बड़े घर की बजाए अब वे दोनों एक छोटे-से घर में रहने लगीं। यहाँ हेलन की पढ़ाई-लिखाई और व्यवहार दोनों पर ध्यान दिया जाने लगा। एक महीने बाद अचानक कुछ ऐसा घटा जिसे हेलन ऐसे याद करती है -

हम कुएँ की ओर जा रहे थे। वहाँ मधुमक्खियों के छत्तों की गँध फैली थी। कोई पम्प चला रहा था। मेरी टीचर मेरा एक हाथ पम्प के मुँह के पास ले गई। जैसे ही पानी के रेले ने मेरे हाथ को भिगोया मेरे दूसरे हाथ में उसने लिखा - Water (पानी)। पहले धीरे से, फिर जल्दी-जल्दी। मेरा पूरा ध्यान उसकी उँगलियों की हरकत पर था। अचानक मुझे लगा जैसे कुछ भूला-सा याद आ रहा है। भाषा का रहस्य मेरे सामने खुल गया था।

भाषणों के अलावा हेलन नाटकों आदि में भी भाग लेने लगी। अपने ड्रेसिंग रूम में हेलन।

हेलन ने पम्प का नाम पूछा। ऐन ने उसके हाथ पर लिख दिया। घर आते वक्त हेलन चीज़ें छूती रही। ऐन उनके नाम लेती गई। अगले कुछ घंटों में हेलन ने 30 नए शब्द सीखे। धीरे-धीरे ऐन ने हेलन को पढ़ना सिखाना शुरू किया। पहले उभरे हुए शब्दों के ज़रिए फिर ब्रेल लिपि के ज़रिए।

बढ़ती प्रसिद्धि

हेलन की खबरें अखबारों में छपने लगीं। किसी के गले और होठों को छूकर वह बोली जा रही बातों को जान लेती थी। हेलन का बोलने का बहुत मन करता। उसने इसके लिए बहुत कोशिश की। बधिर स्कूल में दाखिला भी लिया। लेकिन वह कुछ ऐसी ही आवाज़ें निकाल पाई जिसे ऐन और उसके करीबी दोस्त ही समझ पाते थे।

हेलन सामान्य व ब्रेल टाइपराइटर पर लिख लेती थी। उसने 14 किताबें लिखीं – जानवरों और प्रकृति के प्रति अपने प्यार पर लिखा, महिलाओं को समान अवसर देने के महत्व के बारे में और बेहतर समाज के बारे में लिखा। 1903 में उन्होंने अपनी आत्मकथा लिखी - 'द स्टोरी ऑफ माई लाइफ' (मेरे जीवन की कहानी)। 1905 में लिखी '*द वर्ल्ड आई लिव इन*' (मैं जिस दुनिया में रहती हूँ) में उसने पहली बार अपनी दुनिया के बारे में अपने विचारों को लोगों के सामने खोला। 1913 में उनके निबंधों की किताब 'आउट ऑफ द डार्क' (अँधेरे से बाहर) प्रकाशित हुई।

इसके बाद हेलन-ऐन दुनिया भर में घूमे। हेलन के भाषणों ने धूम मचा दी। ऐन हेलन की बात को समझकर लोगों को सुनाती। ऐन की मदद से और अपने लेखों, भाषणों और अपने जीने के ढंग से हेलन ने लोगों को बता दिया कि किसी भी शारीरिक कमी से जीना तो नहीं रुकता। उन्हीं के शब्दों में :

लोगों को यह समझना होगा कि दृष्टिहीन व्यक्ति कोई बुद्धिजीवी, कोई मसखरा या कोई बेवकूफ नहीं है। उसके पास एक दिमाग है जिसे सिखाया जा सकता है, उसके पास हाथ हैं जिन्हें प्रशिक्षित किया जा सकता है, इच्छाएँ हैं जिन्हें पूरा किया जाना है, और समाज का फर्ज है उसकी मदद करना जिससे वह अपना अधिकतम हासिल कर पाए।

ऐन, हेलन का हाथ अपने होठों, गले और नाक पर रखती ताकि हेलन उसकी आवाज़ महसूस कर सके।

प्रथम विश्व युद्ध में अपनी दृष्टि गंवा चुके एक सिपाही के साथ हेलन। (1919)

मूक-बधिरों के लिए बने एक उपकरण का परीक्षण करती हेलन।

एक गोंडी लोककथा

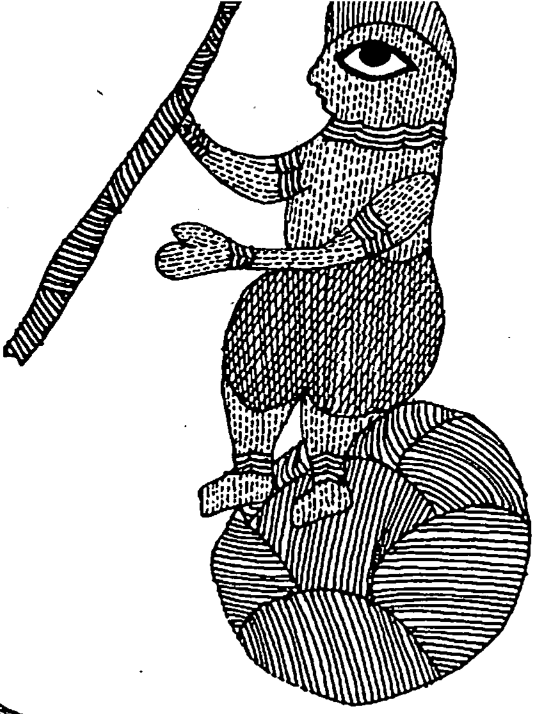

अहीर और जुगनू

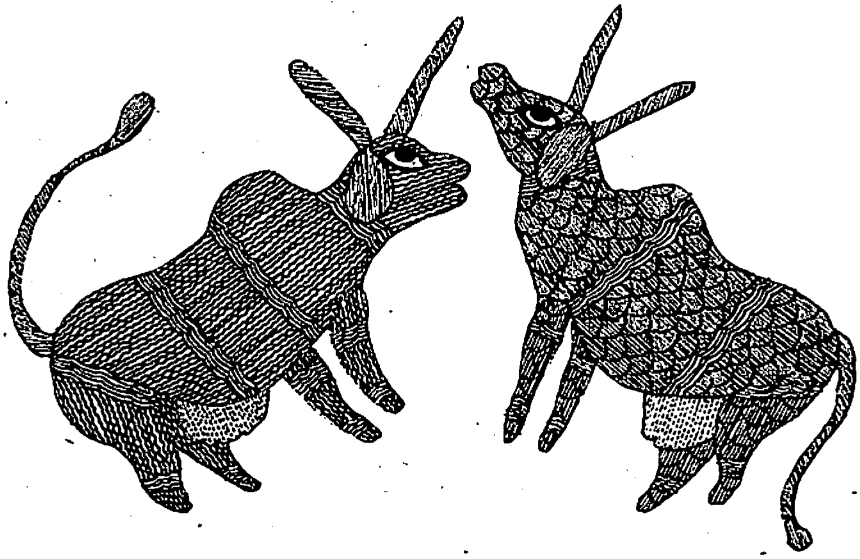

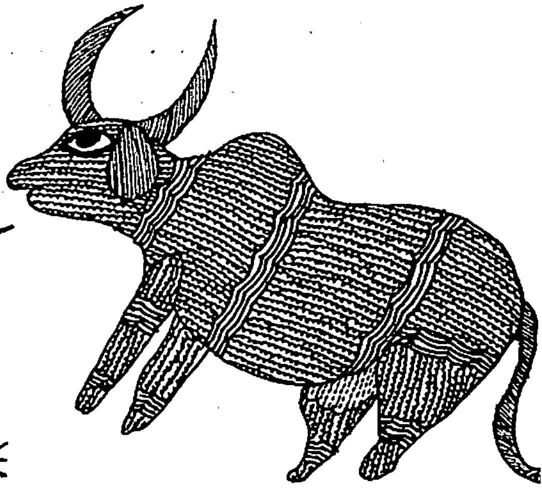

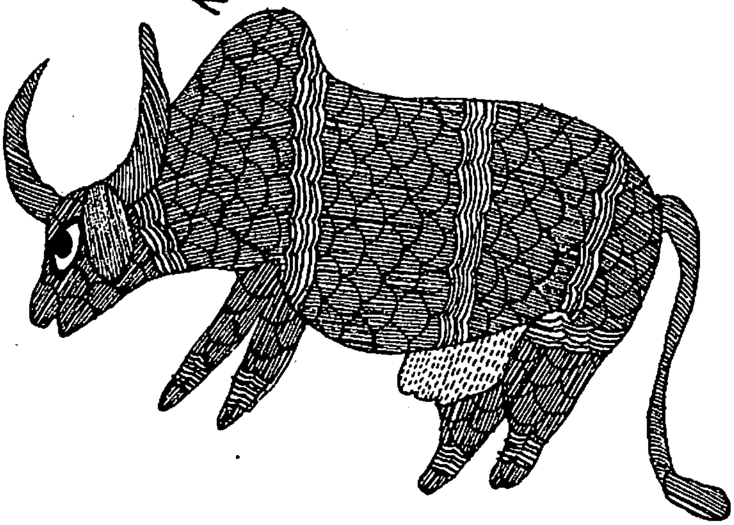

एक गाँव में एक अहीर रहता था। वह गाय चराता था। एक दिन शाम को वो गाय घर वापिस ला रहा था। उसी समय बादल छा गए। और घनघोर बारिश शुरू हो गई। अहीर के गाय बछड़े बिछड़ गए। अँधेरा इतना था कि वे देख ही नहीं सकते थे।

अहीर के पास न तो टॉर्च थी न ही कन्दील। उसके पास केवल बाँस का एक डण्डा था। वो उसी के सहारे अपनी गाय और बछड़े को ढूँढने निकल गया। ढूँढ़ते-ढूँढ़ते उसे बछड़ा मिला। बछड़ा बहुत भूखा था।

भूख के मारे वो ज़ोर ज़ोर से चिल्ला रहा था। अहीर बछड़े को लेकर

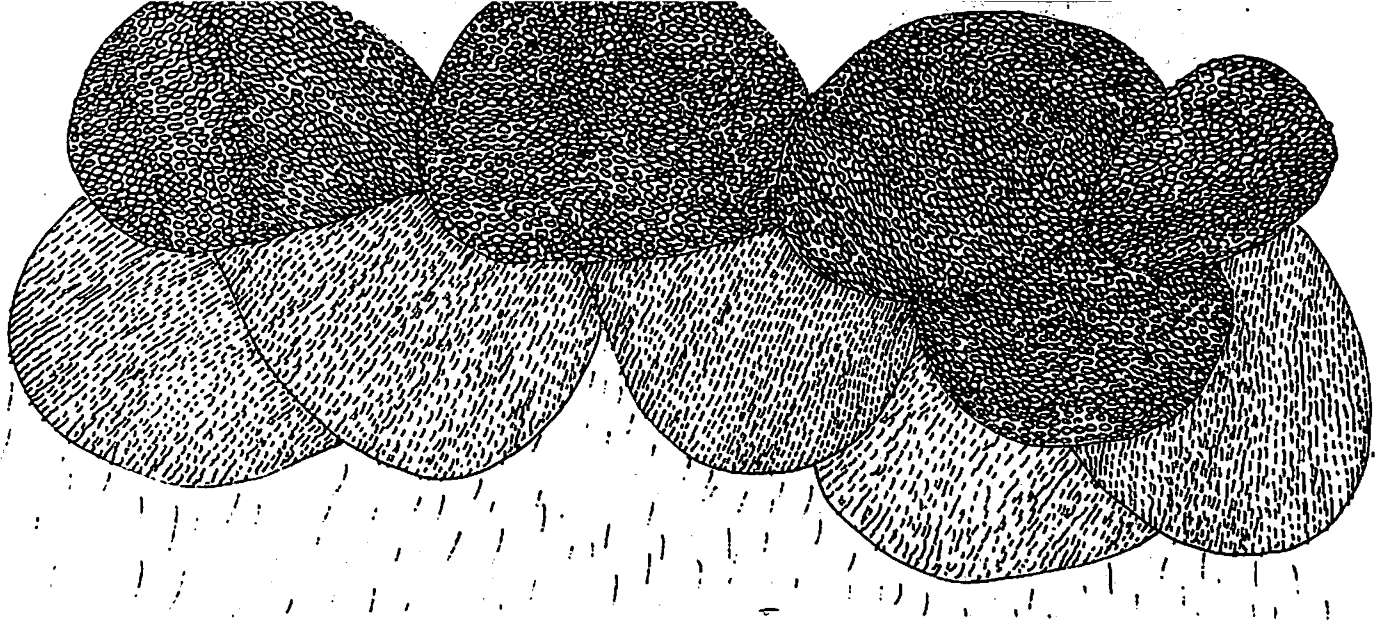

गाय को ढूँढ़ने निकल पड़ा। अहीर जब थक गया। तो एक जगह बैठ गया।

तभी वहाँ एक जुगनू आया। उसने पूछा – "क्या बात है आप परेशान लग रहे हैं।" अहीर ने उसे सारी कहानी सुनाई। जुगनू बोला "कोई बात नहीं। तुम मेरे साथ आओ" अहीर उसका बछड़ा और जुगनू मिलकर गाय को ढूँढ़ने निकले।

एक सेमल के पेड़ तले गाय दिखाई दी।

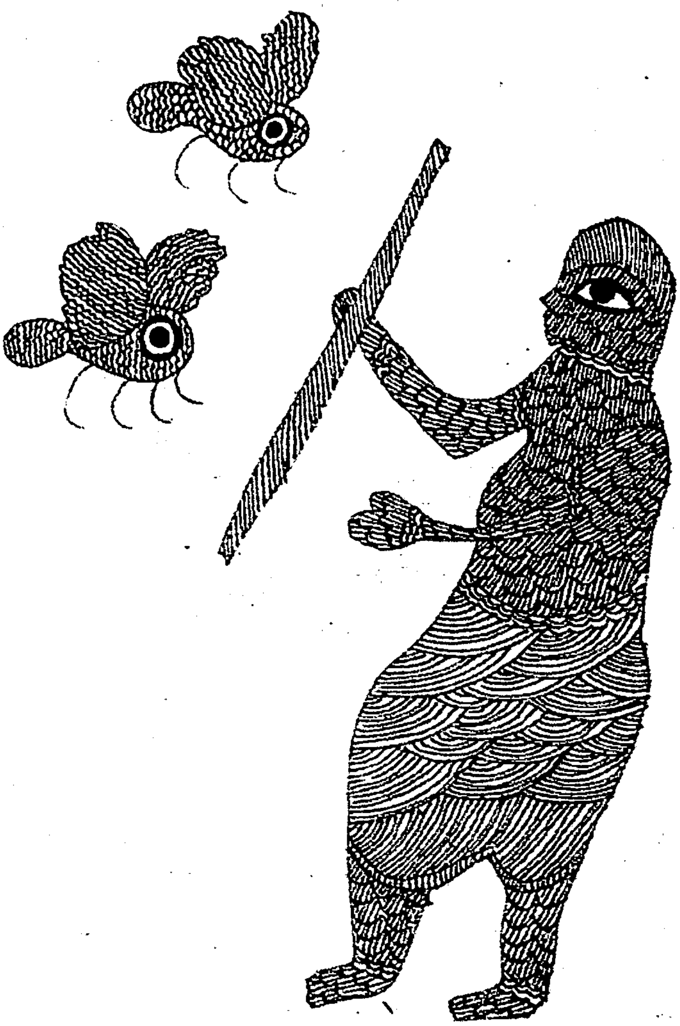

अहीर बहुत खुश हुआ। और गाय और बछड़े के साथ अपने घर चला गया। उस दिन उसने जुगनू को धन्यवाद दिया। और दुआ भी दी कि जुगनू तुम हमेशा ऐसे ही रोशनी करते रहो।

⊙ कहानी व सभी चित्र : दुर्गाबाई

प्याज़ के छिलके

कहने में अक्सर आता है कि 'प्याज़ के छिलके, जितने निकालो उतने कम' और 'प्याज़ के छिलके निकालने से क्या फायदा।' ये दोनों मुहावरे हैं। दरअसल कई मुहावरों और कहावतों के जन्म का आधार हमारा पीढ़ियों का अवलोकन और अनुभव है। प्याज़ के छिलके उतारना भी एक ऐसी ही कहावत है। इसका अर्थ तुम पता करना।

प्याज़ मूलतः मध्य एशिया और भूमध्य सागरीय क्षेत्रों का निवासी है। विज्ञान की दृष्टि से यह एक ज़मीनी कली है जो कंद कहलाती है। लहसुन इसका करीबी रिश्तेदार है। प्याज़ दरअसल एक पत्तेदार सब्ज़ी है। हाँ, यह ज़रूर है कि इसके पत्ते पालक, मैथी की तरह हवाई न होकर ज़मीनी होते हैं। प्याज़ के नाम पर हम जो कुछ भी कच्चा-पक्का खाते हैं वह पत्ते ही हैं। और हैं भी बड़े विचित्र! पालक या पीपल की तरह चपटे नहीं, ये बाँस की तरह गोल और पोले हैं।

तुमने रोटी के साथ खाने के लिए या फिर सलाद के लिए प्याज़ तो काटी ही होगी। अगली बार काटो तो उन्हें खाने से पहले ज़रा ध्यान से देखना। क्या वे गोल छल्लों से मिलकर नहीं बनी हैं? एक बड़े छल्ले में एक छोटा छल्ला और उसके अन्दर फिर एक छोटा छल्ला। यह क्रम चकतियों के केन्द्र तक चलता रहता है। ये सभी छल्ले आमतौर पर समकेन्द्री होते हैं - यानी एक ही केन्द्र वाले। कभी-कभी बाहरी बड़े छल्लों के अन्दर दो-तीन अलग-अलग गोले भी दिख जाते हैं। पर इनके अन्दर के छल्ले भी समकेन्द्री होते हैं। यही छल्ले वास्तव में प्याज़ की पत्तियाँ हैं जो भोजन संग्रह कर, फूलकर मोटी हो जाती हैं।

बरसात के दिनों बाज़ार में जो हरे प्याज़ की गड्डियाँ आती हैं, उन्हें देखकर यह ज़रूर बताना कि क्या प्याज़ पर सिर्फ एक तरह की पत्तियाँ होती हैं या दो तरह की। तुमने एक-बीजपत्री और

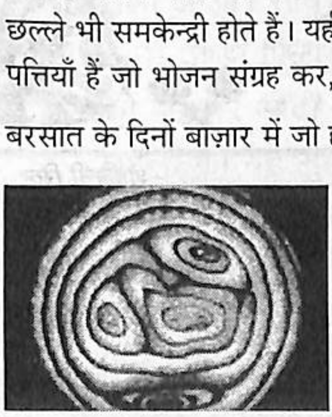

दो-बीजपत्री पौधों के बारे में शायद पढ़ा होगा। प्याज़ के बाहरी सूखे या अन्दर के छिलकों को बारीकी से देखकर क्या तुम बता सकते हो कि वह एक-बीजपत्री समूह का पौधा है या दो-बीजपत्री समूह का?

चलो, फिलहाल हम घर को ही प्रयोगशाला समझकर चकमक के फरवरी 2004 के अंक में दिए प्रयोग का हल ढूँढ़ते हैं। इसमें गोल काटी गई प्याज़ की चकतियों को कुछ देर तक पानी में रखने के बाद ध्यान से देखने को कहा गया था। काटते समय तो प्याज़ की चकतियाँ एक ही तल में थीं। पर पानी में रखने के 15-20 मिनट बाद इसके छल्ले एक दूसरे से कुछ ऊपर उठ जाते हैं। सवाल था कि ऐसा क्यों होता है?

दरअसल यह मामला कोशिका की कार्यकी से जुड़ा है। प्रत्येक जीवित कोशिका में जीव द्रव भरा रहता है। इस द्रव में लवणों की मात्रा सादे पानी की तुलना में कहीं ज़्यादा होती है। जब हम प्याज़ काटकर पानी में रख देते हैं तो उसकी कोशिका की दीवार के एक तरफ लवण घुला हुआ जीव द्रव रहता है, जबकि दूसरी तरफ सादा पानी। इन दोनों तरलों की सान्द्रता में अन्तर के कारण परासरण होने लगता है। यानी पानी कोशिका की दीवार को पार करके अन्दर जाता है। इससे इसका आयतन बढ़ जाता है। कुल मिलाकर इस तरह छल्लों का आकार बढ़ता है।

सबसे बाहरी छल्ला तो फैलने के लिए स्वतन्त्र है, उसे रोकने वाला कोई नहीं। उसके अन्दर के छल्लों को भी बाहरी छल्ले के फैलने से थोड़ी जगह मिल जाती है। परन्तु बाहर के तीन-चार छल्लों के बाद अन्दरूनी छल्लों को बाहरी छल्ले फैलने से रोकते हैं। ऐसे में फैलने लायक जगह बनाने के लिए ये थोड़ा फिसलकर ऊपर खिसक जाते हैं। इस तरह कुछ भीतरी छल्ले सतह से ऊपर उठ जाते हैं।

चलो, एक और प्रयोग। प्याज़ की ताज़ी कटी चकतियों को नमक के पानी में रखना और हमें बताना कि छल्लों का क्या हुआ? फैले या सिकुड़े?

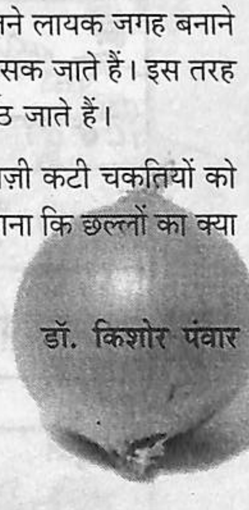

डॉ. किशोर पंवार

एक साहब हैं दिनेश रस्तोगी। बच्चों के साथ काम करते हैं। और चाहते हैं कि बच्चे अपने मन की बात लिखें। इस तरह उनका लिखने का अभ्यास भी होगा। इसके लिए वे अपने साथ टूक्कू नामक एक चिड़िया बच्चों के पास ले जाते हैं। और उससे बातें करते हैं। वे बच्चों से कहते हैं कि वे टूक्टू को पत्र लिख सकते हैं। टूक्कू की ओर से जवाब दिनेश देते हैं। बच्चों ने टूक्कू को ये पत्र लिखे -

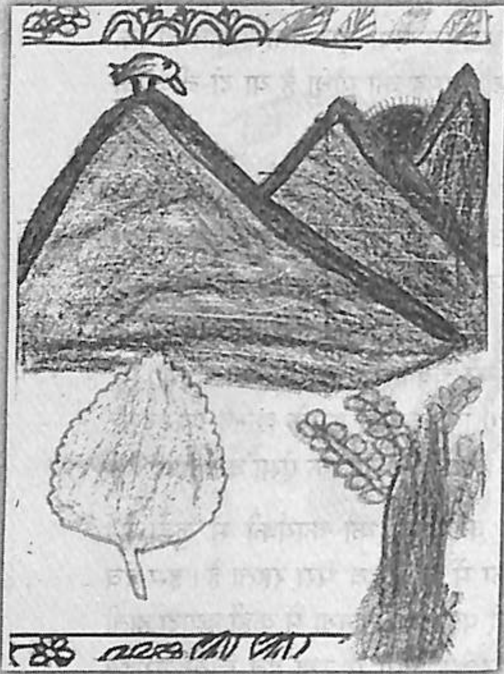

- सुनीता रानी

मेरे प्यारे दोस्त टूक्कू

टूक्कू तुम हमसे बात नहीं करते हो। क्यों तुम सरजी से ही बात करते? टूक्कू तुम हमें बहुत प्यारे लगते हो। टूक्कू तुम अगले बार हमसे बात करना तुम किसके साथ रहते हो। टूक्कू तुम मेरी कक्षा में पड़ा करो।

- शालिनी सिंह

- शालिनी सिंह

मेरे प्यारे दोस्त टूक्कू

टूक्कू तुम मुझे बहुत अच्छे लगते हो। हमने मेले का दृष्य बनाया था। उसमें हमको प्रथम पुरस्कार मिला था। टूक्कू तुम आए थे खाली तुम सरजी से बात कर रहे थे। हम लोग से क्यों नहीं बात कर रहे थे?

टूक्कू अब आना तो हम से भी बात करना। टूक्कू तुम कहाँ रहते हो। टूक्कू तुम पहाड़ पर रहते हो वहाँ क्या खाते हो?

- सुनीता रानी

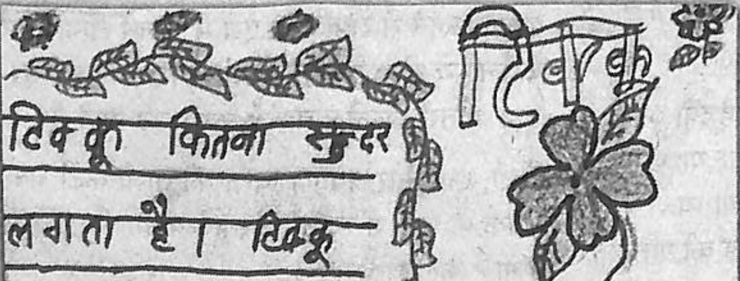

- शिखा

✎ टीना श्रीवास

टी.बी. का जाना

मेरी सहेली की मम्मी एक दिन सुबह अपने घर में भोजन बना रही थीं और मेरी मम्मी उनकी मदद कर रही थीं। तभी एक साधु बाबा और उसके साथ दो व्यक्ति गली में आए। वह कहने लगे कि मैं शीतला माता का भक्त हूँ। उसके पास एक कटोरा था। उसमें उसने जोत जला रखी थी। वह कहने लगा कि मैं बहुत दूर से आया हूँ बालिका। और उसने चलती बोलती मशीन माँगी। शोर सुनकर हम सब लोग बाहर आए। साधु बाबा ने अंटी से पूछा तेरे कितने बच्चे हैं बालिका। अंटी ने कहा तीन लड़की और एक लड़का। साधु ने कहा - तेरे पुत्र पर किसी भूतप्रेत की छाया है। यदि तुम हमें बोलती मशीन दान दे दे तो तेरे पुत्र को बचाऊँगा। तभी मम्मी और मौसी बोली बोलती मशीन क्या? पूछो तो इस बाबा से। इसकी बातों में मत जाओ उसे कुछ मत देना। तभी साधु और उसके साथी बोले- यह दोनों बाई कौन हैं। इन्हें बाहर निकालो। नहीं तो तेरा पुत्र माताजी के श्राप से नहीं बचेगा। तभी अंकल ने कहा - जो भी है बोलती मशीन दे दूँ तो क्या होगा। साधु बोला- मेरे जाने के बाद यह घटना किसी को नहीं बताना। आंटी बोली बोलती मशीन में क्या दूँ। साधु बोला - टी.बी.। टी.बी. को कपड़े में बाँधकर उसके साथ चली आओ। साधु ने कहा हमें ठण्डा पीना है तो ठण्डा पिलाया। तब अंकल ने टी.बी. को बाँधकर आटो में साधु को दे दी। मेरी सहेली को यह सुनकर बहुत दुख हुआ क्योंकि टी.बी. उनके यहाँ बहुत ही मुश्किल से आई थी।

✎ *आरती गौरीशंकर माहेश्वरी, देवास, म.प्र.*

✎ *आनन्द शर्मा, छठवीं*

डायरी का एक पन्ना

आज मैं दिन में जब तखत पर बैठा था तो मम्मी मेरे सिर में तेल लगा रही थी। आज धूप भी बहुत अच्छी खिली थी। पापा अमरूद के पेड़ से अमरूद तोड़ रहे थे। अमरूद बहुत मीठे थे। हमारे अमरूद के पेड़ के पीछे एक बेर का पेड़ है उसमें भी बहुत सारे बेर लगे। लेकिन बच्चे कच्चा ही खा जाते हैं।

आज मैंने देखा। मेरे अमरूद के पेड़ पर बहुत सारी गिलहरियाँ और चिड़ियाँ एक दूसरे को पकड़ रही थीं। कभी गिलहरियाँ जामुन के पेड़ पर जातीं तो कभी नीम के पेड़ पर। मुझे बहुत अच्छा लगता, जब गिलहरियाँ ज़ोर ज़ोर से चीं...चीं...चीं करतीं तो लगता जैसे चिढ़ा रही हों।

शिवांक, नई दिल्ली

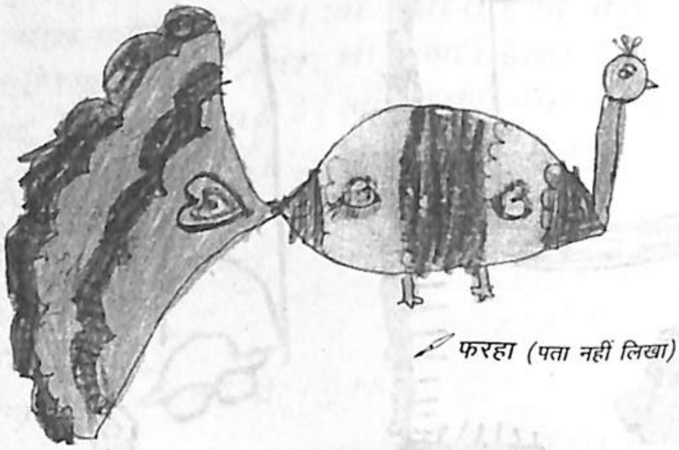

फरहा (पता नहीं लिखा)

कोयल काली होती है

प्यारी-प्यारी काली कोयल,
हमको गीत सुनाने वाली
ऊँचे गगन में उड़ने वाली,
हाथ न किसी के आने वाली
प्यारी-प्यारी, काली-काली

बैठ पेड़ पर डाल हिलाती,
मीठे हमको फल खिलाती
उसके फल मीठे होते हैं
गीत सुरीले होते हैं।

प्रियंका चौहान, आठवी, भोपाल, म.प्र.

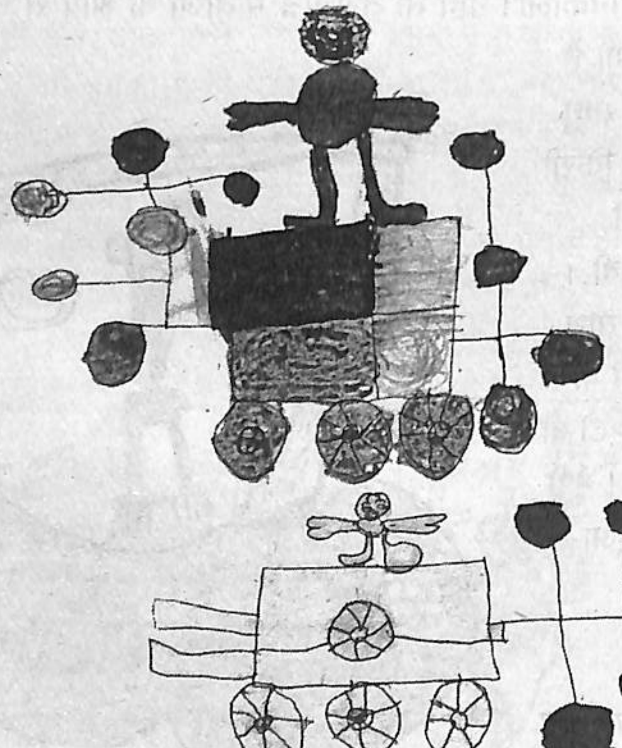

अभय जैन, पहली (पता नहीं लिखा)

सबसे ज़्यादा प्यार

मुझे मेरे पापा से डर लगता है बहुत भारी से बोलते हैं। एक बार मुझे बहुत मारा था। मैडम बोलती हैं कि जो अपने को सबसे ज्यादा मारता है वह ही सबसे ज़्यादा प्यार करता है। मम्मी भी यही कहती हैं। इसलिए मुझे पापा और मैडम सबसे ज़्यादा प्यार करते हैं।

हर्ष परिहार, दूसरी, भोपाल, म.प्र.

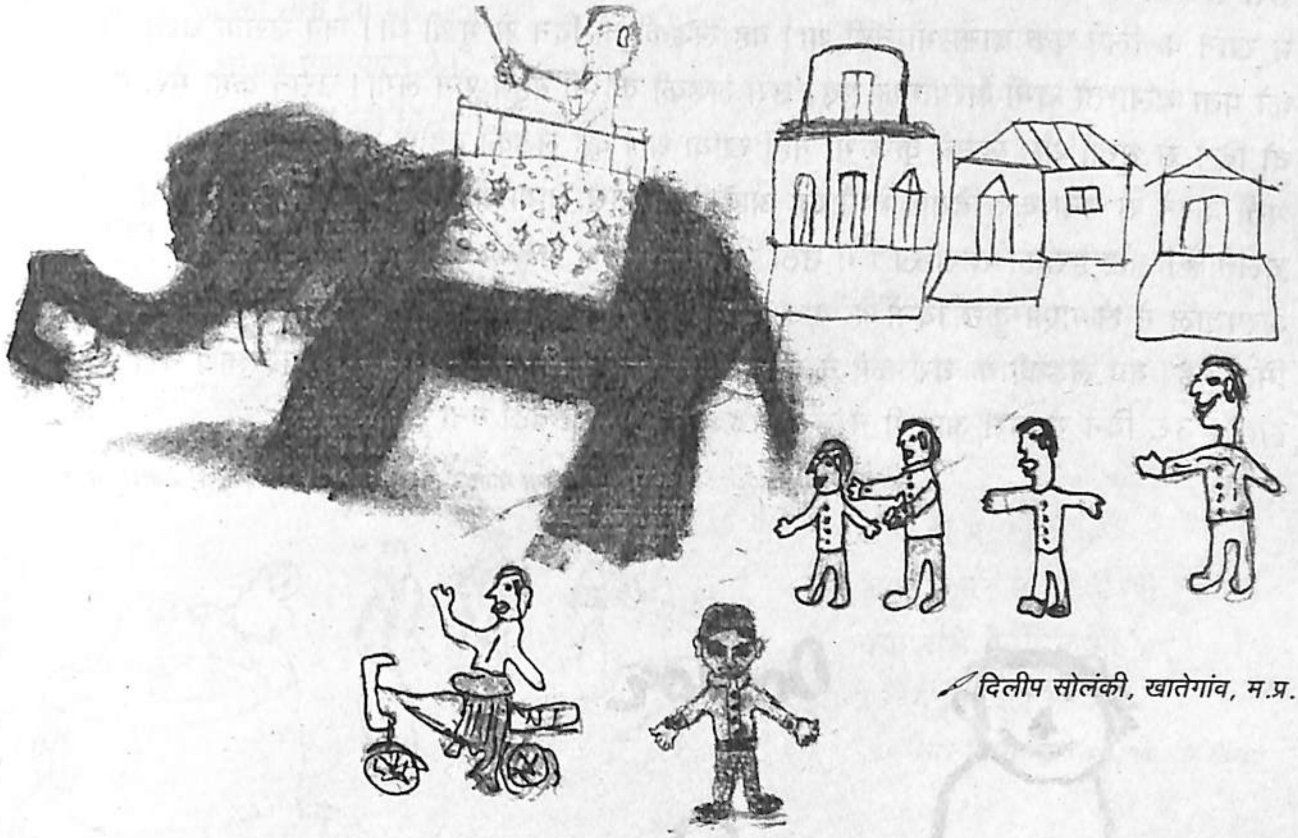

दिलीप सोलंकी, खातेगांव, म.प्र.

आया प्यारा

आया प्यारा,
साथी हमारा,
तरह-तरह की जानकारी।
चित्रकारी प्यारी-प्यारी।
खेल चौपाल,
कहानी सवाल।
चर्चा वार्ता और समाचार।
विज्ञान पत्रिका और अखबार।
चित्रमाला लकदक।
समझे प्यारे यह है चकमक।

- श्याम भारद्वाज, कुल्लू, हिमाचलप्रदेश

घटना

एक बार की बात है। जब मैं 10 या 11 साल की थी। जब मैं स्कूल जाती थी। तब एक लड़की एक ट्रक के नीचे आ गई वह लड़की बहुत जख्मी हो गई थी। उसे कोई भी हाथ लगाने से डर रहा था। तब एक आदमी ने उसे उठाया और अपनी गाड़ी में बिठाकर अस्पताल ले गया। वह लड़की दर्द से बहुत चीख रही थी। वह आदमी फिर उसे अस्पताल में छोड़कर चला गया, उस लड़की के घरवालों को ढूँढ़ा, तो पता चला वह लड़की बहुत गरीब थी। उस लड़की के घर में खाने के लिए एक दाना भी नहीं था। वह लड़की दो दिन से भूखी थी। जब उसके घरवालों को पता चला तो सभी अस्पताल गए। उस लड़की की माँ बहुत रोने लगी। उसने कहा मेरी बेटी दो दिन से भूखी थी। उसने कुछ भी नहीं खाया था। वह लड़की बेहोश थी डॉक्टरों ने भी उसे भर्ती करने से मना कर दिया। तभी वह आदमी जो उसे लाया था, उसने कहा कि इसे इन्दौर ले चलते हैं। और इसका सारा खर्च में उठाऊँगा। फिर उस लड़की को वह इन्दौर के अच्छे अस्पताल में ले गए। कुछ दिनों के बाद वह लड़की अच्छी हो गई और उसे अस्पताल से छुट्टी मिल गई। वह लड़की के घरवालों ने कहा अगर तुम न होते तो हमारी बेटी हमारे साथ नहीं होती। उस दिन से उस आदमी ने उस लड़की को अपनी बेटी बना ली।

- सफीना मजहर अली, दसवीं, महसीनपुरा, देवास, म.प्र.

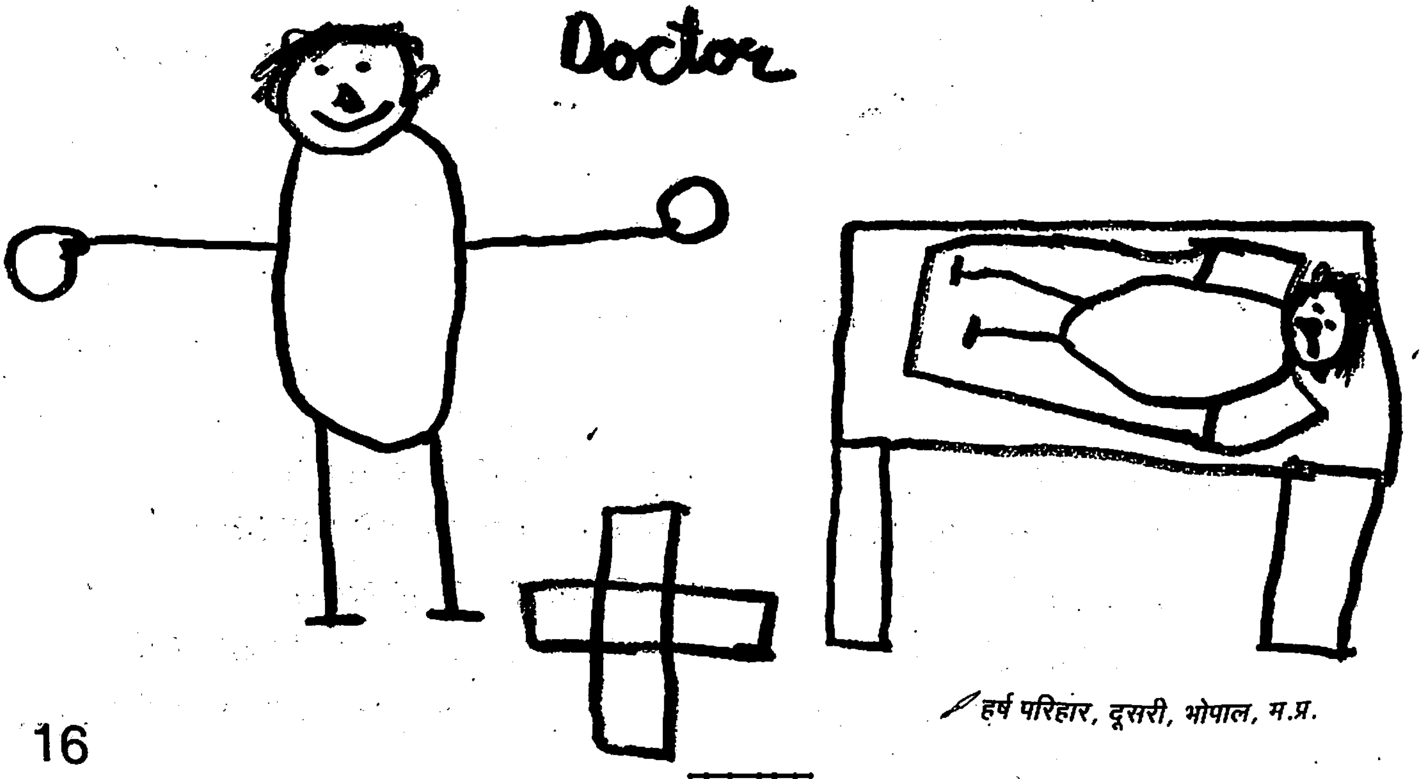

हर्ष परिहार, दूसरी, भोपाल, म.प्र.

आसमान

देखो देखो आसमान को देखो
इसका रंग कितना सुंदर है।
आसमान में दिखे सूरज
दिन को आता रात में जाता।

बादल आसमान में आते
और सूरज को ढक जाते।
इसके अन्दर एक परत है।
जो हमें सूरज की किरणों से बचाता।

सोचो अगर यह परत न होती
तो क्या जीवन सम्भव हो पाता?

सारांश ठाकुर, चौथी, जबलपुर, म.प्र.

टीचर जी

टीचर जी आप क्यों देती हैं।
स्कूल का इतना सारा होमवर्क?
संडे की छुट्टी तो होती है
करने को आराम।।

स्कूल के काम ने
किया हमें परेशान।
पापा-मम्मी ने कैंसिल कर दिया
घूमने का प्रोग्राम।
खाते-पीते, खेलते-कूदते
बस होमवर्क की टेंशन रहती।
होमवर्क करो होमवर्क करो
मम्मी हमको डाँटती रहतीं।।

टीचरजी!
आप ही बताइए
जब आप स्कूल में पढ़ती थीं
क्या संडे के दिन भी
इतना होमवर्क करती थीं?

भावना जायसवाल, (पता नहीं लिखा)

भारती यादव, पाँचवी, (पता नहीं लिखा)

चित्र-पहेली

संकेत - दाएँ से बाएँ

1

4
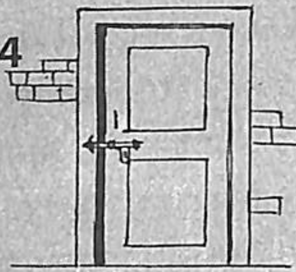

7

8 सवा में है रहना

9

10
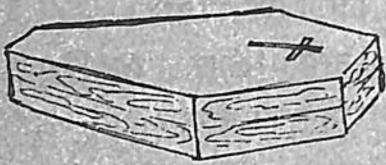

11 चार रन

13 विज्ञापन पढ़ बड़ी देर तक करते रहे ठिठोली।
फिर वो बोले बड़े प्यार से मुझे बिठाके ओली।।

14

16
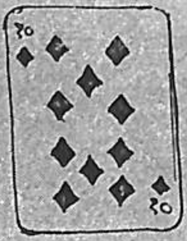

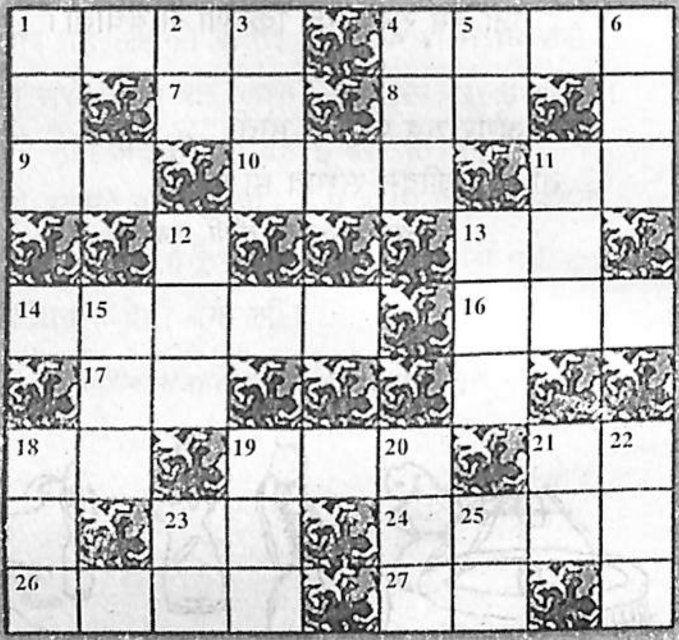

21 कचालू में है लिखने की चीज़

17

23

24
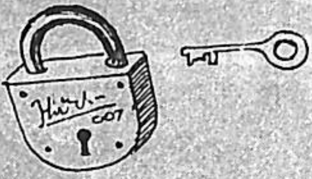

26
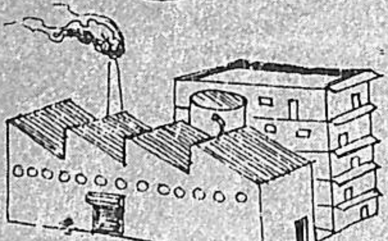

18 मज़ार में है आनंद

19 पटक में है सिंचाई का
एक तरीका

27 इसे उठा कर ...दो

संकेत -
ऊपर से नीचे

1

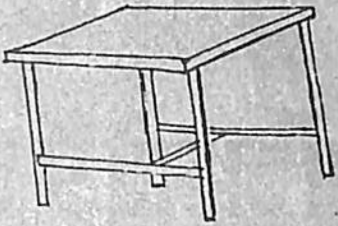

2

3

4

5

6 स्वाद के लिए एक उर्दू शब्द

11 तेरह और पंद्रह के बीच...

12

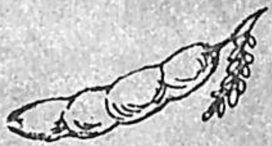

13

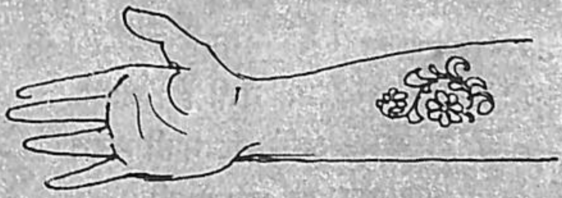

15

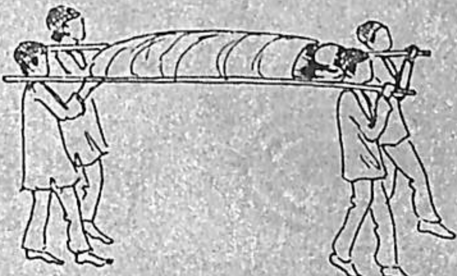

18

19 खटना में है शरीर का एक अंग

20

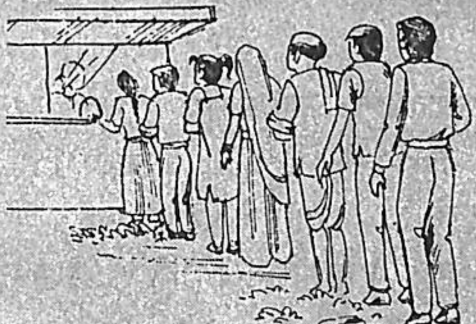

22

23

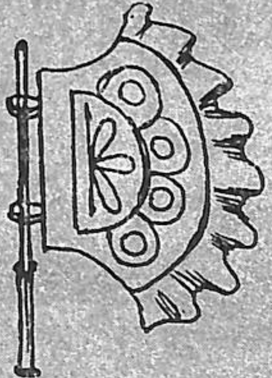

21 पिता का छोटा भाई

25 एक हजार का
सौ गुना

क्या आप जानते हैं?

क्या तुम्हें मालूम है कि ग्रहों पर भी पहाड़ होते हैं? सौर मण्डल का सबसे बड़ा पहाड़ मंगल ग्रह का पहाड़ मॉलम्पस मॉन्स है। इसकी चौड़ाई 600 किलोमीटर और ऊँचाई 26 कि.मी. है। हमारे सबसे विशाल पर्वत माउंट एवेरेस्ट से यह लगभग तीन गुना बड़ा है।

चौंकना मत अगर पता चले कि बाज़ार में बहुतायत में नज़र आने वाली मच्छर भगाने वाली चीज़ें दरअसल मच्छरों को भगाती नहीं हैं। वो बस तुम्हें मच्छरों से छिपा देती हैं। यानी मच्छरों के सेंसर अंगों (जिनकी मदद से उन्हें आसपास की चीज़ों की जानकारी मिलती है।) को ढँक देती हैं। इससे मच्छरों को तुम्हारे वहाँ होने का पता ही नहीं चलता।

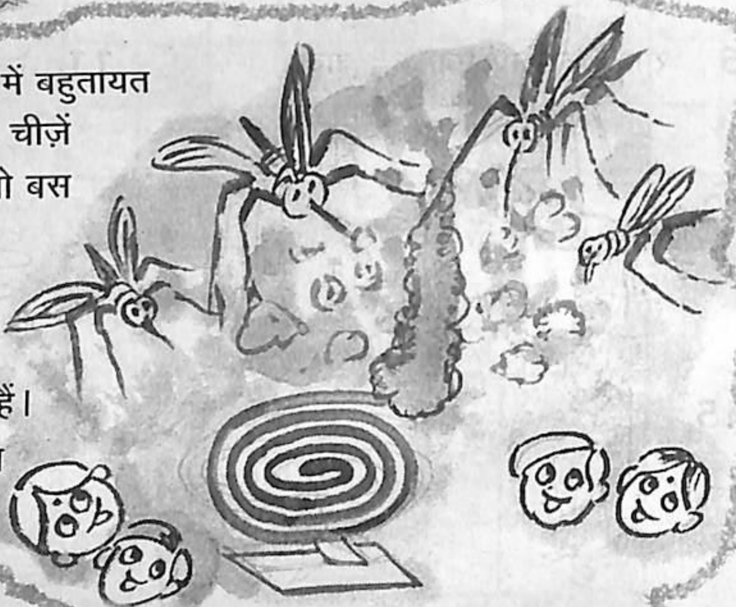

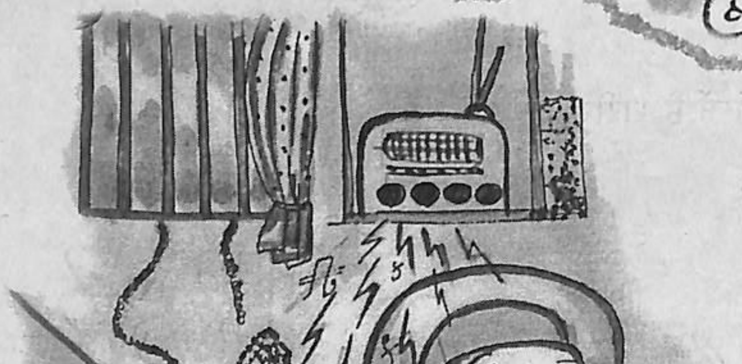

सावधान! जहाँ दीमक हों वहाँ तेज़ संगीत बिलकुल न चलाएँ। संगीत के साथ में दीमक एक घर को दुगुनी तेज़ गति से खत्म कर डालती है।

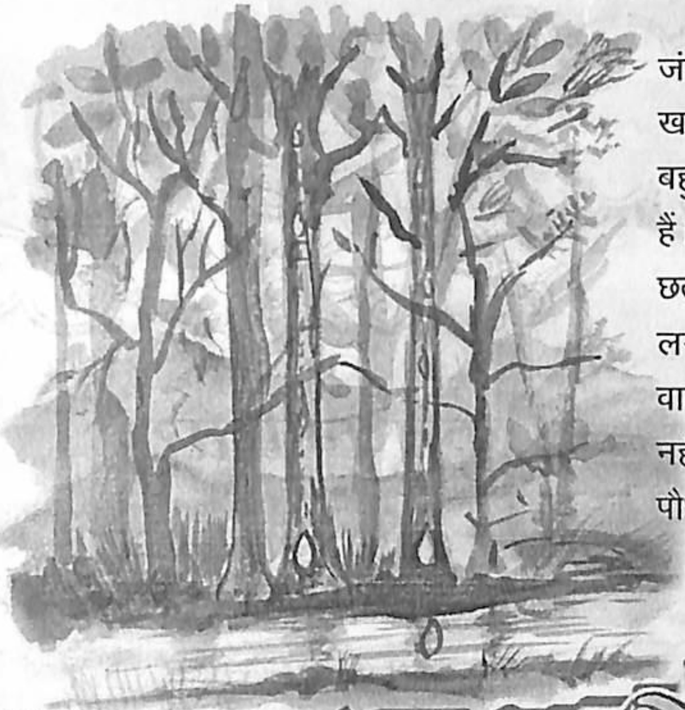

जंगल तो तुम जानते ही हो ना। पर बर्षा वन खास जंगल होते हैं। यहाँ बारिश, नमी और गर्मी बहुत ज़्यादा होती है। और पेड़ भी बहुत घने होते हैं। इतने घने कि बारिश की एक बूँद को पेड़ की छत से नीचे ज़मीन तक आने में 10 मिनट तक लग सकते हैं। ऑस्ट्रेलिया के वर्षा वनों में मिलने वाले 80 प्रतिशत फूल दुनिया भर में और कहीं नहीं मिलते हैं। इन वनों में हर चार में से एक पौधा दवाओं में इस्तेमाल होता है।

अदना-सी चींटी अपने खुद के वज़न से 20 गुना तक भार उठा सकती है। एक चींटी औसतन 45 से 60 दिनों तक जीती है। एक वयस्क चींटी ठोस भोजन को चबा या निगल नहीं सकती है। वह इसका रस चूसकर बचा पदार्थ छोड़ देती है।

कहा जाता है कि कुछ गोरों ने पहले-पहल एक कूदते फाँदते जीव को देखकर ऑस्ट्रेलिया के आदिवासियों से पूछा, "इसे क्या कहते हैं।" इस पर वे बोले, "कैंगुरु।" उनकी भाषा में इसका मतलब है- 'मुझे नहीं मालूम।' और यहीं से हुआ कंगारू का नामकरण। कंगारू में बच्चे की थैली जन्मजात नहीं होती है। बच्चे के जन्म के बाद उसे रखने के लिए मादा कंगारू में यह थैली बनती है।

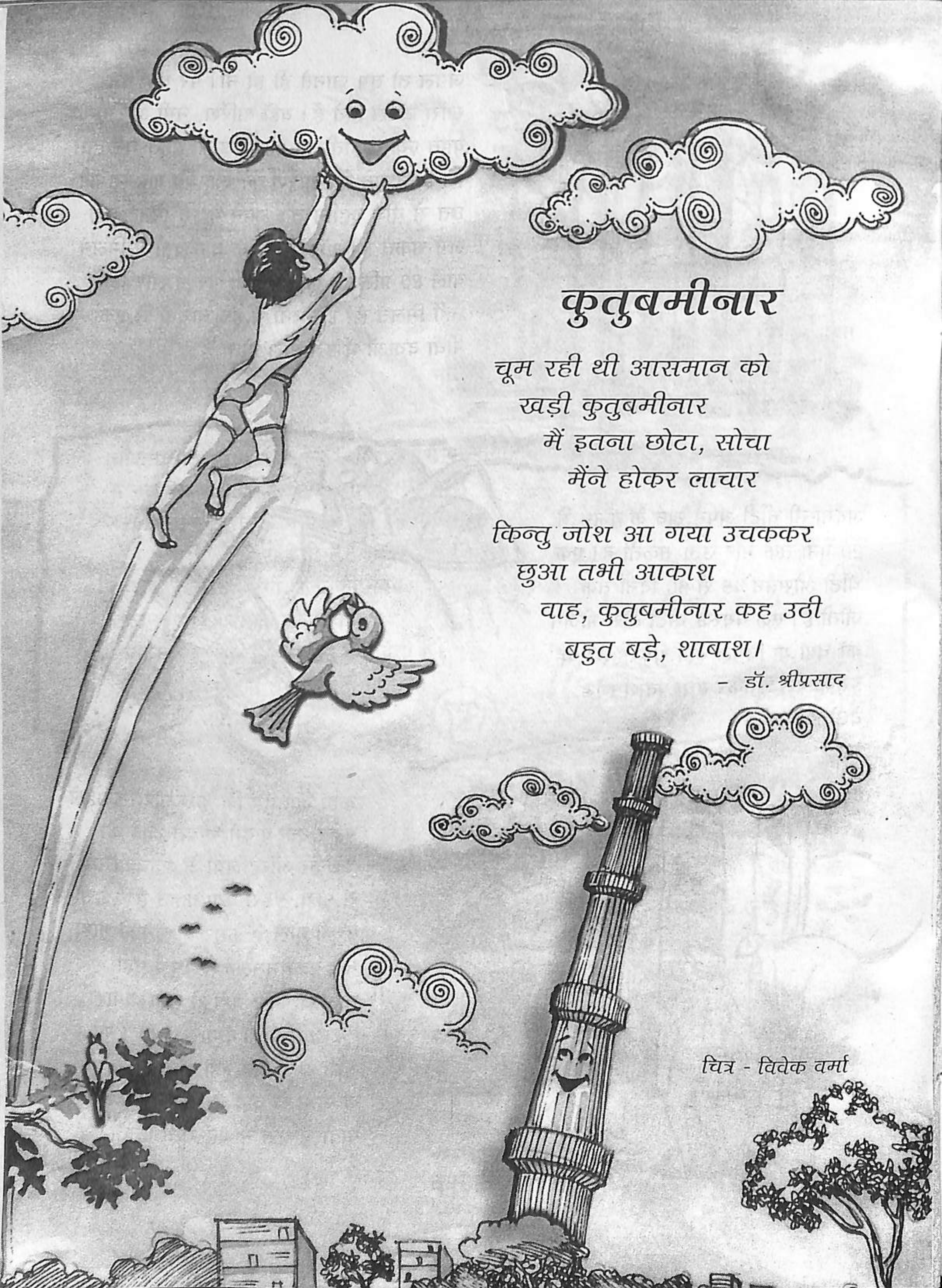

कुतुबमीनार

चूम रही थी आसमान को
खड़ी कुतुबमीनार
मैं इतना छोटा, सोचा
मैंने होकर लाचार

किन्तु जोश आ गया उचककर
छुआ तभी आकाश
वाह, कुतुबमीनार कह उठी
बहुत बड़े, शाबाश।

– डॉ. श्रीप्रसाद

चित्र - विवेक वर्मा

अनोखी स्लेट

बड़ी मज़ेदार है यह स्लेट। न बत्ती, न पोंछना। जितना चाहे लिखते जाओ। अहमदाबाद के डॉ. दिलिप भट्ट ने इसे अपने दृष्टिहीन बेटे के लिए बनाई थी। तुम भी इसे बना सकते हो।

स्लेट

लकड़ी का कोई तख्ता ले लो। इस पर वेलक्रो चिपका लो। आम तौर पर वेलक्रो का इस्तेमाल बैग, बटुओं, छोटे बच्चों के जूतों आदि को बन्द करने में होता है। इसमें दो पट्टियाँ होती हैं। जो आपस में चिपक जाती हैं।

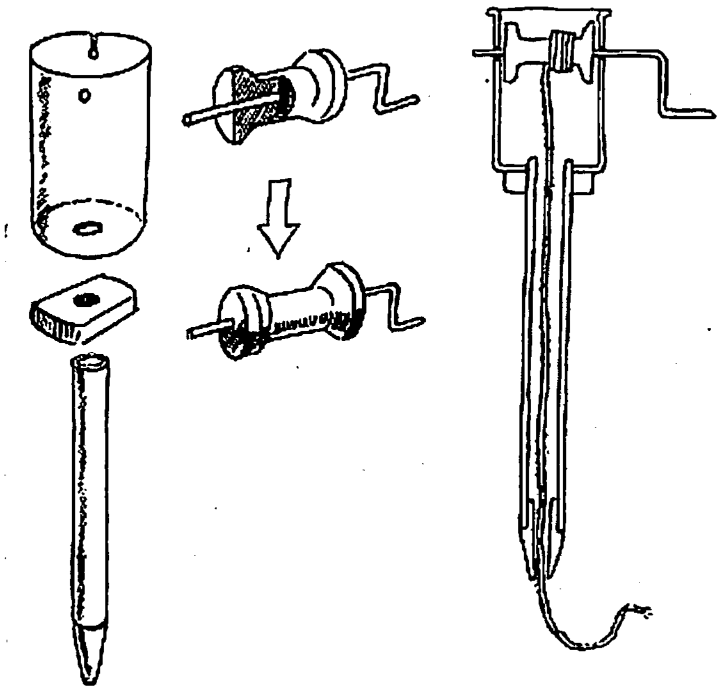

पेन

इस बिना स्याही वाले पेन में लिखाई ऊन से होती है। इसे बनाने के लिए कैमरा की फिल्म के रोल की डिब्बी और पेन का खोल चाहिए। डिब्बी के तले पर एक छेद कर लो। इस में पेन फँसाना है। पेन अपनी जगह पर कसा रहे इसलिए छेद बहुत बड़ा नहीं होना चाहिए। चाहो तो बीच में रबर की एक चकती लगा लो। एक तार लो और इसे Z आकार में मोड़ लो। इस तार का एक हिस्सा हैण्डल बनेगा और दूसरा घिरनी में जाएगा। चित्र देखते जाना। रबर की एक घिरनी बनाकर इसमें तार घुसा दो। डिब्बी के ऊपरी सिरे पर दो छेद कर दो। इसमें तार और घिरनी फँसानी है।

इनमें से एक छेद पर एक चीरा लगा दो (चित्र देखो)। इससे घिरनी फँसाने में सहूलियत होगी। ऊन के एक सिरे को घिरनी पर बाँधते हुए ऊन को घिरनी पर लपेट लो। ऊन के दूसरे सिरे को पेन में पिरोते हुए पेन की नोक वाले सिरे से निकाल लो। पेन से ऊन की छोटी सी नोक निकालकर वहाँ गठान मार दो। घिरनी को अपनी जगह पर लगा लो। तुम्हारा पेन तैयार है। वेलक्रो की स्लेट पर पेन फेरते जाओ। घिरनी घूमेगी और ऊन खुलती जाएगी। स्लेट पर चित्र या जो चाहो वह उभरता जाएगा। स्लेट पोंछकर नया चित्र बनाना हो तो पेन के ऊपरी सिरे के पास वाले हैण्डल को उलटी दिशा में घुमाओ। ऊन घिरनी पर लिपटती जाएगी।

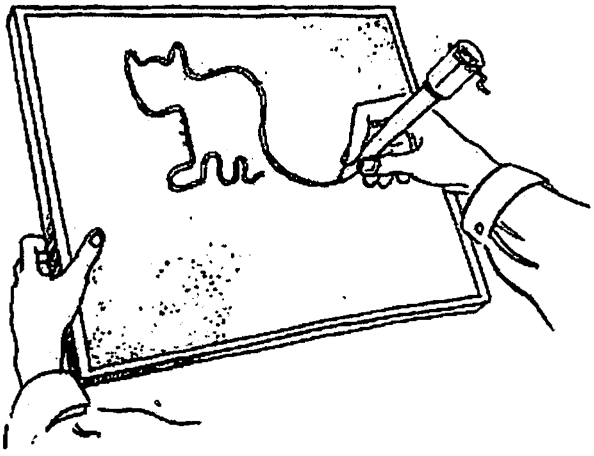

लेखक परिचय - भीष्म साहनी

भीष्म साहनी ने हिन्दी में कई उपन्यास, कहानियाँ और नाटक लिखे हैं। उनकी कहानी 'गुलेल का खेल' बच्चों को बहुत पसंद आयी थी। उनका जन्म पाकिस्तान के रावलपिंडी शहर में हुआ था। उनकी पढ़ाई रावलपिंडी, लाहौर और पंजाब में हुई। उन्होंने कई काम किये। व्यापार किया, अध्यापन किया। भारत-पाक बँटवारे के बाद पत्रकारिता की और फिर इप्टा की नाटक मंडली में काम किया। मुंबई में वे बेकारी से भी जूझे।

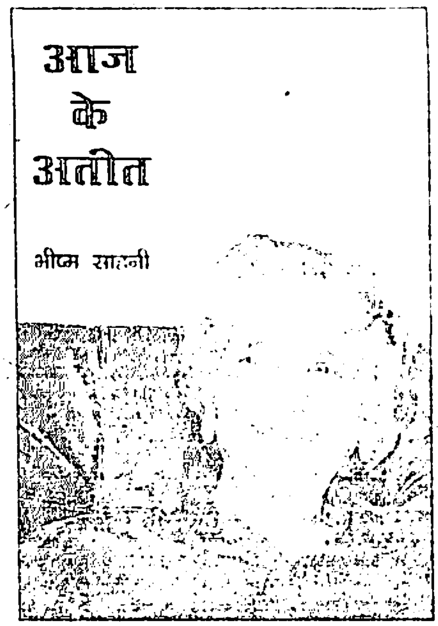

उन्होने सबसे लंबे समय तक अध्यापन कार्य किया। सात साल तक उन्होंने मास्को में अनुवादक का कार्य किया। इस दौरान उन्होंने रूसी भाषा का गहरा अध्ययन किया। उन्हें कई पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। भीष्म साहनी ने 'मोहन जोशी हाजिर हो' नाम की एक हिन्दी फिल्म में अभिनय भी किया है। उनके बड़े भाई बलराज साहनी हिन्दी फिल्मों के बड़े अभिनेता रहे हैं।

उनकी अंतिम किताब 'आज के अतीत' उनकी आत्मकथा है। यह किताब 2003 में प्रकाशित हुई। इसमें भीष्म साहनी ने अपने बचपन के किस्सों का पिटारा भी खोला है। इसी पिटारे से कुछ रोचक अंश छाप रहे हैं।

हुआ यूँ कि...

गुरुकुल की शिक्षा-दीक्षा का ही प्रभाव रहा होगा कि एक दिन बलराज मुझसे बोले। हम लोग गुरुकुल की ओर जा रहे थे

"सुन।"

"क्या है?।"

"मेरे पीछे-पीछे चल। अब से हमेशा, मेरे पीछे-पीछे चलाकर।"

"क्यों?"

"क्योंकि तू छोटा भाई है। छोटे भाई साथ-साथ नहीं चलते।"

मैं उसके मुँह की ओर देखने लगा।

"राम और लक्ष्मण कभी साथ-साथ नहीं चलते थे।"

"मैं लक्ष्मण नहीं हूँ"

"तू मेरा छोटा भाई तो है।"

और उसने मुझे धकेलकर पीछे कर दिया।

"और सुन।"

"क्या है?"

"आगे से मुझे बलराज मत बुलाया कर। मैं तेरा ज्येष्ठ भ्राता हूँ।"

"तो क्या बुलाया करूँ।"

"भ्राताजी! तू मुझे भ्राताजी कहकर बुलाएगा। अब हो जा मेरे पीछे।"

जब हम आगे बढ़ चले तो बोला :

"जब राम और लक्ष्मण दौड़ते भी थे तो आगे-पीछे। मैं तुम्हें उनके दौड़ने का ढंग सिखाऊँगा।"

मैं पहले तो उसके चेहरे की ओर देखता रहा, फिर बड़ी अनिच्छा से कहा, "अच्छा भ्राताजी!" मैंने यह हुक्म भी सह लिया और उसके पीछे हो लिया। जब घर लौटने पर मैंने उसे "भ्राताजी!" बुलाया तो बहनें खिलखिलाकर हँस पड़ीं।

"कौवा चला हंस की चाल!" बड़ी बहन ने कहा।

पर माँ ने कहा, "ठीक ही है। भ्राताजी ही बुलाए। कुछ तो सीखेगा। बड़े भाई को नाम से कौन बुलाता है?"

पर "भ्राताजी" शब्द मेरे गले में अटकता था।

"मैं गुल्ली-डंडा खेलने जा रहा हूँ, तू चलेगा......भ्राताजी?"

एक बार जब मुझे घर लौटने में देर हो गई और बलराज मुझे बाँह से पकड़कर खींचते हुए घर ले जाने लगे तो मैंने बाँह छुड़ाते हुए गाली बक दी :

"घर जाता है मेरा.....भ्राताजी!"

उस रोज़ "भ्राताजी" कहने पर भी मुँह में मिर्चें पड़ीं। पर धीरे-धीरे इस अनुशासन का अभ्यस्त हो गया, और बरसों तक भ्राताजी ही बुलाता रहा। पर स्कूल छोड़ने पर भ्राताजी के स्थान पर पंजाबी का लोकप्रिय शब्द "भापा" आ गया और वही सम्बोधन आजीवन चलता रहा।

हम स्थानीय आर्य स्कूल में भर्ती हो गए। बलराज चौथी कक्षा में और मैं पहली कक्षा में। उम्र के लिहाज़ से मुझे दूसरी कक्षा में रखा जाना चाहिए था। मैं दूसरी कक्षा में जाकर बैठ भी गया था। कक्षा के अध्यापक, सरदार मास्टरजी मेरे सिर पर हाथ फेरते, मुझे दुलारते भी रहे थे कि मंत्रीजी का बेटा पढ़ने आया है, पर फिर उनकी नज़र मेरे पाजामे पर पड़ गई, और कुछ देर तक वे उसकी ओर देखते रहे, और फिर पास खड़े हेडमास्टर साहब से कुछ फुसफुसाकर बोले। हेडमास्टर साहब ने भी मेरे पाजामे की ओर देखा और सिर हिलाया। जिस पर सरदार मास्टरजी ने मुझे अपना बस्ता-तख्ती उठाने को कहा, और मुझे धीरे-धीरे चलाते हुए पहली कक्षा में ले गए।

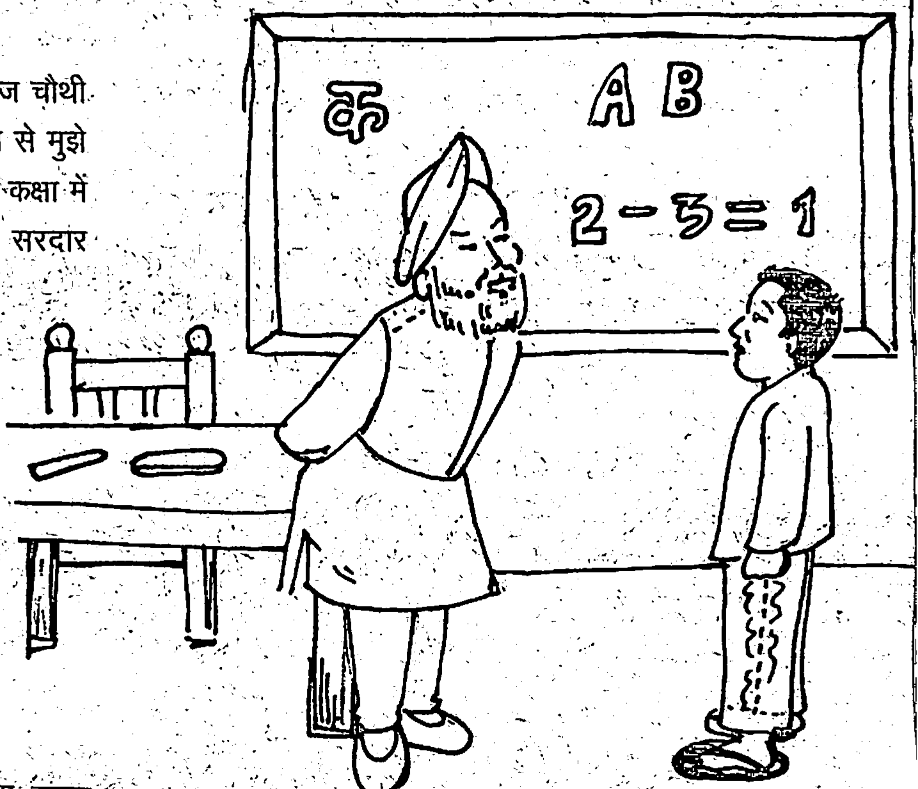

भाग्य बली होता है। मेरी किस्मत, मैं पाजामा उल्टा पहनकर स्कूल में जा पहुँचा था। घर में भी किसी को पता नहीं चला, और सरदार मास्टरजी ने तो पिताजी से भी कह दिया, "अभी छोटा है, कम समझ है, इसे पहली कक्षा में ही रखना ठीक होगा।" और पिताजी ने भी हाँ में सिर हिला दिया, जैसे उनसे पहले हेडमास्टर ने हिला दिया था। इस तरह उस निर्णायक घड़ी के बाद जब तक हम दोनों भाई, पहले स्कूल में और फिर कॉलेज में पढ़ते रहे, यह तीन साल का अन्तर बराबर बना रहा। यह ऐसी खाई थी जिसे पाटा नहीं जा सकता था। उम्र में दो साल छोटा, पढ़ाई में तीन साल पीछे। ऐसे हादसे मेरे साथ ज़िन्दगी में बहुत होने वाले थे।

एड्स को शिकस्त देता कान्हा

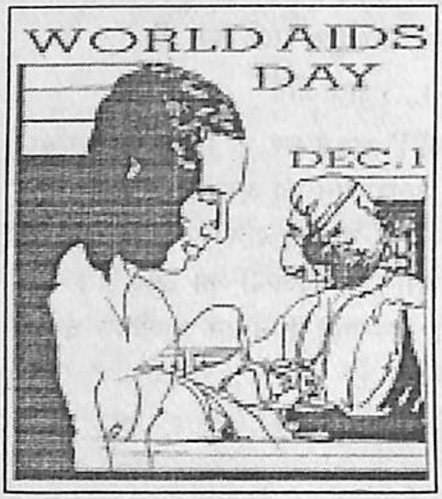

एड्स एक खतरनाक बीमारी है। हर साल दुनिया में इससे कई लोगों की मौत हो रही हैं। दुनियाभर में एक दिसंबर को एड्स दिवस मनाया जाता है। इस दिन सरकार, संस्थाएँ तथा लोग रैली या अन्य माध्यम से लोगों को जागरूक करते हैं। तुम्हारे शहर, कस्बे या गाँव में भी ऐसी गतिविधियाँ हुई होगीं। हम यहाँ एड्स से पीड़ित एक ज़िंदादिल बच्चे के बारे में बता रहे हैं:-

आठ साल का कान्हा एड्स का मरीज है। इन्दौर के सरकारी अस्पताल में उसका इलाज चल रहा है। कई तरह की गलत धारणाओं के कारण लोग एड्स के मरीजों से घृणा करते हैं। लेकिन कान्हा की कहानी कुछ और है। कान्हा एमवाय अस्पताल में सभी के आकर्षण का केन्द्र है। यही नहीं उसके कारण अब धीरे धीरे एमवाय अस्पताल के डाक्टरों व नर्सो में भी एडस के मरीज़ों के प्रति व्यवहार में बदलाव आ रहा है।

कान्हा की कहानी दुखद है। कान्हा मध्यप्रदेश के धार ज़िले के बोरगाँव का निवासी है।उसके पिता हुकुम सिंह ट्रक ड्राइवर थे। उसकी माँ, पिता तथा तीन भाइयों की एड्स से मृत्यू हो गई। उसके चाचा सौभाग्यप्रताप सिंह छह महिने पहले उसे एमवाय अस्पताल में भर्ती करके चले गए। शुरू में वह बहुत दुबला-पतला था। उसे तेज बुखार था तथा शरीर पर कुछ निशान थे। देखने और जाँच करने के बाद पता चला कि उसे एड्स है। कान्हा के परिवार का कोई व्यक्ति नहीं था जो उसकी हिफाजत करता। तब एम.वाई. अस्पताल के डॉ पाण्डे ने उसे अस्पताल में ही रहने की मंजूरी दे दी थी।

डॉक्टरों ने कान्हा के केस को चुनौती के रूप में लिया। उसके इलाज के लिए ज़रूरी दवाओं का प्रबंध किया। समय पर दवा और देखभाल से कान्हा के स्वास्थ्य में सुधार हुआ। उसका वजन भी बढ़ने लगा। आज कान्हा के लिए अस्पताल ही घर है। और वहाँ के लोग परिवार के सदस्य। जब कोई कान्हा से पूछता है कि तुम कहाँ रहते हो तो उसका सीधा-सा जवाब होता है वार्ड नंबर 28! अस्पताल के लोग उसे घर का बना खाना, कपड़े, जूते, मिठाई, किताबें और चाकलेट आदि उपहार देते है। कान्हा भी अस्पताल के जूनियर डॉक्टरों तथा नर्सो को काम में मदद करता है। वह अपने व आसपास के वार्डो में मरीज़ों के ज़रूरी काम करता है। कान्हा शायद ही कभी अपने बेड पर होता है। वह या तो सीनियर डॉक्टर, नर्स और मरीज़ों से बात कर रहा होता है या जूनियर डॉक्टरों, नर्सिंग के छात्रों के साथ खेलता है।

एमवाय अस्पताल के डॉ. पाण्डे कहते हैं कान्हा का केस हमारे जीवन का सबसे महत्वपूर्ण केस है। आज हम केवल कान्हा के इलाज ही नहीं बल्कि उसके भविष्य उसके पुनर्वास, उसकी पढ़ाई आदि को लेकर भी चिंतित रहते हैं। कान्हा ने अपने व्यवहार से एड्स मरीज़ों के प्रति हमारे व्यवहार को ही बदल दिया है।

(हिन्दुस्तान टाइम्स की एक खबर पर आधारित)

तकलीफों के बीस साल

इस तीन दिसम्बर को भोपाल गैस त्रासदी के बीस साल पूरे हुए। अब से बीस साल पहले तीन दिसम्बर 1984 की रात यह दुखद घटना हुई थी। इसमें एक ज़हरीली गैस (मिथाइल आइसो साइनेट) रिसने से बीस हज़ार से ज़्यादा लोग मारे गए थे। करीब पैंतीस साल पहले 1969 में अमेरिका की यूनियन कार्बाइड कंपनी ने भोपाल में एक कारखाना लगाया। इस कारखाने में फसलों पर लगने वाले कीड़ों मकोड़ों को मारने वाली दवाइयाँ या कीटनाशक बनाए जाते थे। कंपनी बाज़ार में मिलने वाले कीटनाशकों से ज्यादा असरदार (असल में ज्यादा खतरनाक) कीटनाशक बनाती थी। कीटनाशक बनाने में ज़हरीली गैसों का इस्तेमाल होता है। यूनियन कार्बाइड ने ज़्यादा खतरनाक कीटनाशक बनाने के लिए मिथाइल आइसोसाइनेट (मिक) गैस का इस्तेमाल किया। उस समय मिक गैस बनाने वाली दुनिया में यह अकेली कंपनी थी। मिक गैस में अन्य गैसों के अलावा फॉस्जीन जैसी जहरीली गैस का इस्तेमाल किया जाता है। फॉस्जीन गैस के कारण द्वितीय विश्व युद्ध के समय लाखों लोगों की जानें गई थीं।

भोपाल में फरवरी 1980 तक मिक प्लांट बन गया और इसका उत्पादन भी शुरू हो गया। कई बार इस कारखाने से गैस लीक होने की छोटी-मोटी घटनाएँ हुईं। लेकिन सन 1984 में दो और तीन दिसंबर की आधी रात को गैस रिसी तो भयानक हादसा हुआ। लगभग पूरे शहर में गैस फैल गई। हज़ारों लोग मारे गए। और हज़ारों तमाम बीमारियों से घिर गए। आज बीस साल बाद भी यह दुर्घटना अपना असर दिखा रही है। और तो और नई पीढ़ी के भी हज़ारों लोग इस त्रासदी को भुगत रहे हैं। इन तमाम तकलीफ़ों के बदले लोगों को थोड़ा बहुत मुआवज़ा दे दिया गया। इस मुआवज़ा वितरण में भी तरह-तरह की विसंगतियाँ रहीं। एक तो एजेण्टों ने मुआवज़ा दिलाने के लिए लोगों को जी भर लूटा। फिर कुछ वार्डों को ही गैस पीड़ित माना गया। ऐसे में कई ऐसे लोगों को मुआवज़ा मिल गया, जो असल में गैस पीड़ित नहीं थे और कई ऐसे लोग छूट भी गए जिन्होंने इस त्रासदी को भुगता। हालाँकि हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने फिर से कुछ और मुआवज़ा देने के लिए कहा है। पर क्या ये मुआवज़े काफी होंगे? लोगों ने सालों बदहाली में, बीमारी में काटे। कितनी जानें गईं। कितने बच्चे बीमारी लिए पैदा हुए। उनकी तकलीफों का मुआवज़ा क्या हो सकता है?

इस बार भी भोपाल के लोगों ने उस निर्मम घड़ी को याद किया। जो नहीं रहे उनको याद किया। पीड़ितों के लिए कुछ माँगें रखीं। प्रदर्शन किए। रैलियाँ कीं। सभाएँ कीं। और दुनिया को आइंदा के लिए ऐसी त्रासदियों के बारे में आगाह किया। लोगों की बेहतरी में जुटे तमाम संगठनों ने मिलकर कई चीज़ें तय कीं। जिसमें पीड़ितों को स्वास्थ्य सुविधाएँ, साफ पानी जैसी बुनियादी ज़रूरतें पूरी करने की माँगे हैं। साथ ही एक उम्मीद और एक खबरदारी कि **अब और भोपाल नहीं**।

बच्चों की पत्रिका नींव

चकमक क्लब खातेगाँव के बच्चों ने हस्तलिखित पत्रिका नींव शुरू की है। अब तक इसके दो अंक निकाले हैं। स्वयंसेवी संस्था समावेश खातेगाँव के आसपास चकमक क्लब संचालित करती है। चकमक क्लबों का उद्देश्य बच्चों की रचनात्मक अभिव्यक्ति को मौका देना है।

इन क्लबों में विभिन्न तरह की गतिविधियाँ होती हैं। बच्चे आसपास घट रही चीज़ों पर विचार करते हैं। और विभिन्न मुद्दों पर अपनी समझ बनाते हैं। बच्चे कई तरह की मौलिक सामग्री तैयार करते हैं। इस सामग्री को नींव पत्रिका से एक मंच मिलता है। चकमक क्लब के बच्चे कहते हैं कि नींव को वे हर महीने निकालेगें। पत्रिका में चित्र, कहानी, कविता, वर्ग पहेली जैसी सामग्री होती है।

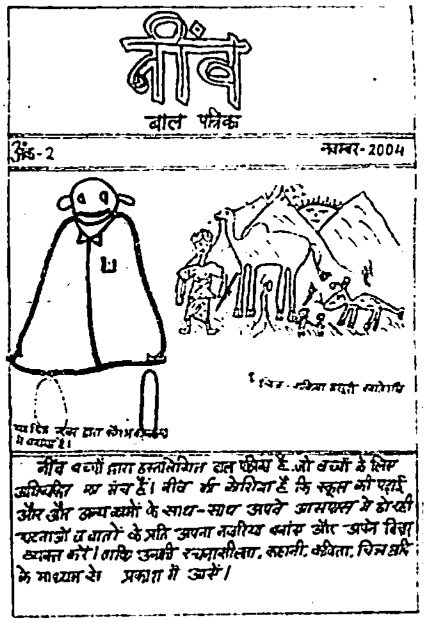

बाल विविधा सम्पन्न

हर साल कामेट मीडिया नाम की एक संस्था द्वारा बाल विविधा आयोजित किया जाता है। इस साल 3 से 6 दिसंबर तक चले इस कार्यक्रम में बच्चों को खेलने तथा मज़ा मौज के साथ काम करने का मौका मिला। बच्चों ने मिट्टी के खिलौने तथा अन्य चीज़ें, पेंटिंग, चित्रकला और विज्ञान के प्रयोग किए। रंगमच नाम से हुए एक कार्यक्रम में बच्चों को मज़ेदार कहानियाँ सुनाई गईं। जादू-शो हुआ। साथ ही मार्शल आर्ट के करतब पेश किए गए। इसके अलावा इस आयोजन में स्कूली पाठ्य पुस्तकों का विश्लेषण हुआ और सुधार के प्रयासों पर चर्चा हुई। शिक्षकों के लिए कार्यशालाएँ भी हुईं, जिनमें पढ़ाने को बेहतर और रोचक बनाने के तरीकों पर विचार हुआ।

चार दिन चले इस कार्यक्रम में देश भर में बच्चों के लिए काम करने वाली संस्थाओं ने मदद की। और बच्चों से जुड़ी तमाम गतिविधियाँ हुईं।

○ रपट - प्रमोद मैथिल

चलते चलते...

मरीज़ - मुझे आँखों के आगे धब्बे दिखाई देते हैं।
डॉक्टर - क्या चश्मे से फायदा नहीं हुआ।
मरीज़ - हुआ न। अब धब्बे साफ दिखने लगे हैं।

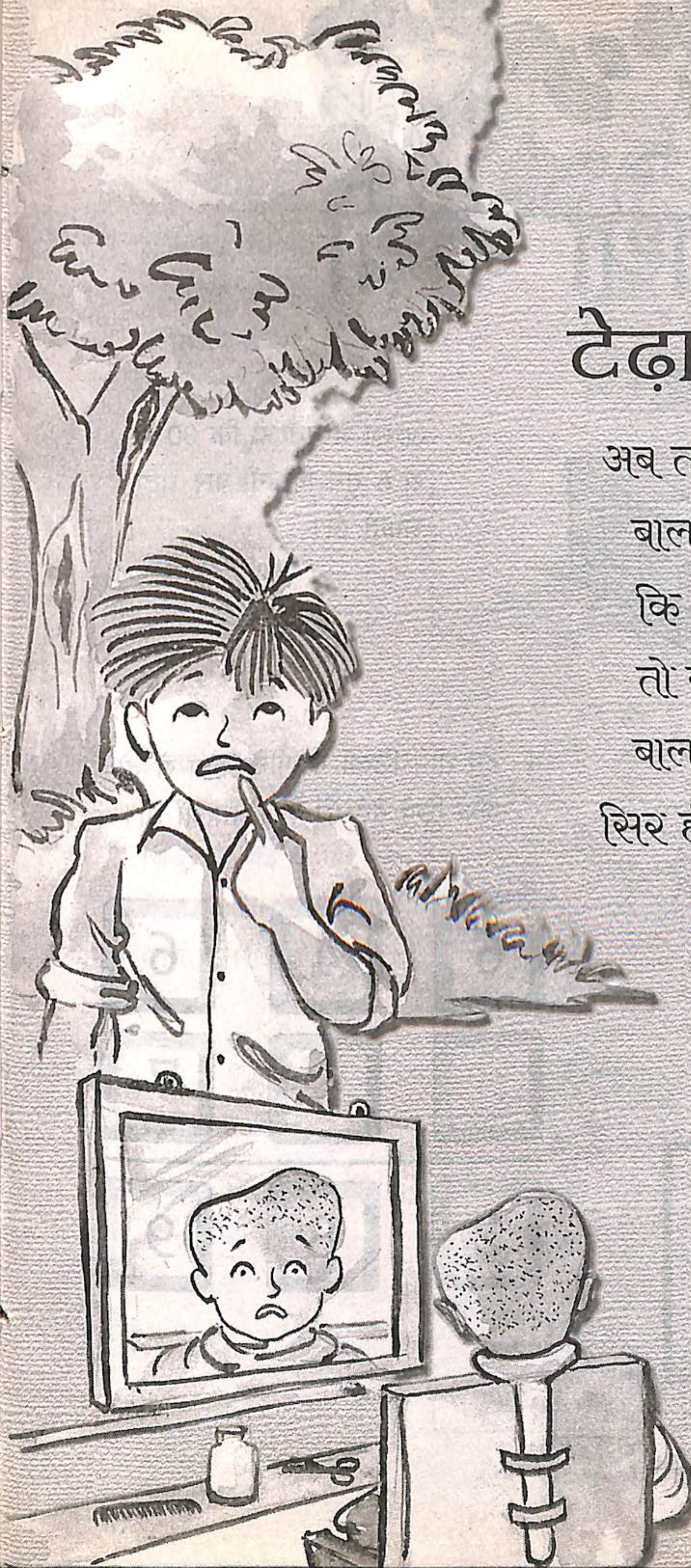

टेढ़ा कौन

अब तक सोचता था मैं
बाल क्यों हैं मेरे इतने टेढ़े
कि एक दिन जब कटाए बाल
तो खुला यह राज़
बाल तो हैं सीधे लेकिन
सिर ही था टेढ़ा

- शेल सिल्वरस्टाईल

अनुवाद - शशि सबलोक
चित्र - विवेक वर्मा

माथा पच्ची

1. इस आकृति में कुल कितनी ईंटें हैं?

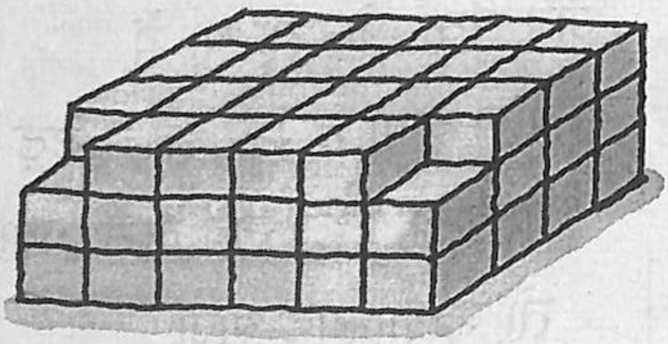

2. क्या बगैर हाथ उठाए तुम ऐसी आकृति बना सकते हो? हाँ, पर एक ही लाईन पर दुबारा पेंसिल नहीं चलाना!

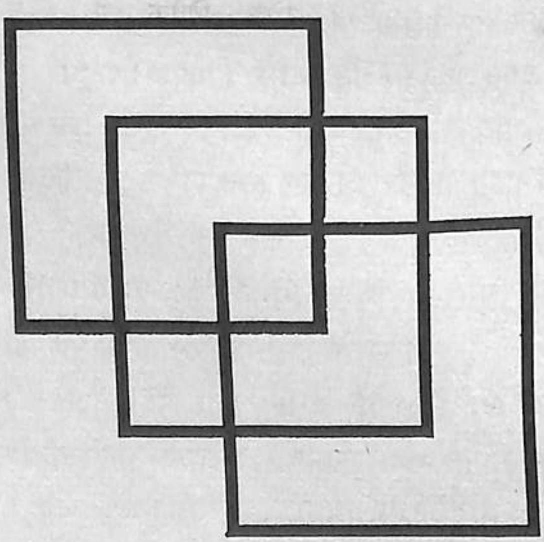

3. अच्छा ये बताओ कि 30 में से 5 तुम कितनी बार घटा सकते हो।

4. इन तीन डिब्बों के पीछे कौन-से दो अंक छिपे बैठे हैं! ज़रा बताओ तो।

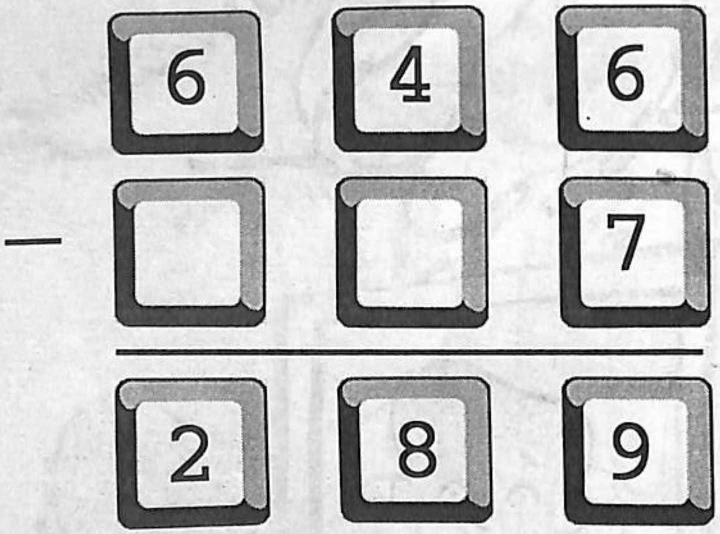

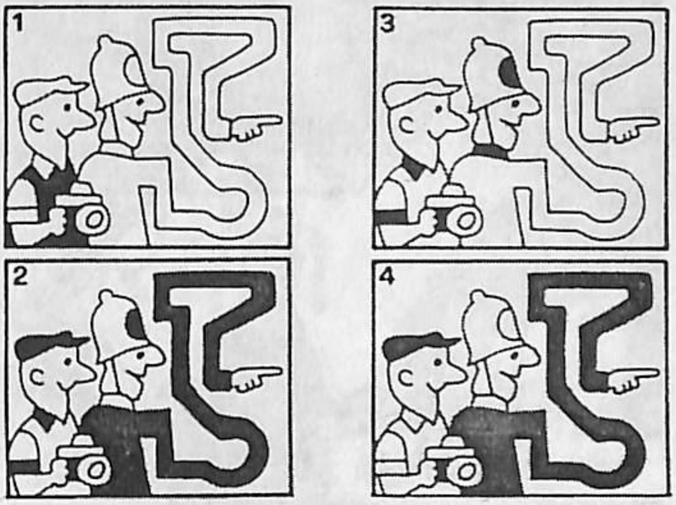

5. इस चित्र को ज़रा गौर से देखकर बताओ कि यहाँ दिया गया निगेटिव इनमें से किस चित्र का हो सकता है।

6. दिखने में भले ही एक से लगें पर इन दो चित्रों में कई अंतर हैं। क्या तुम इनमें सात अंतर ढूँढ़ सकते हो?

किताब पढ़ती कामिनी

दृष्टिहीनों के लिए किताबों की छपाई

सातवीं की कामिनी महावर ने बस्ता खोला। टटोलते हुए एक किताब निकाली और मेज़ पर रख दी। पहले पन्ने पर उँगली फिराते हुए पढ़ने लगी - English Reader। वो अचम्भित करने वाली फुर्ती से पढ़ रही थी। शायद यह एकमात्र ऐसी लिपि होगी जिसमें दुनिया भर की न जाने कितनी भाषाएँ लिखी जाती हैं। लिपि से भाषा का कुछ पता ही नहीं चलता। और सभी की लिखाई भी एक जैसी होती है। है तो यह कुल जमा छह बिन्दियों का ही जोड़-तोड़ लेकिन इनकी छपाई कैसे होती होगी? अभी भी और आज से बहुत पहले भी। पता चला ....

1786 में पहली बार ऐसी किताब छपी थी। इसमें कागज़ पर अंग्रेज़ी के उभरे हुए अक्षर से बने शब्द थे। इन्हें उँगली के पोरों से छूकर पढ़ा जाता था। इसलिए इनका आकार बड़ा होना ज़रूरी था।

उभरे शब्दों की छपाई के लिए प्लेट पर रबर जैसी किसी मुलायम चीज़ की एक परत होती थी। इससे उभरे शब्द छपाई के वक्त कागज़ पर गड़ जाते थे।

1824 में लुई ब्रेल ने 6 बिन्दियों वाली लिपि इजाद की। ब्रेल छपाई के लिए बिन्दियों वाले ब्लॉक इस्तेमाल किए जाते थे। रैक पर एक-एक अक्षर जोड़कर शब्द, वाक्य आदि बनाए जाते। इस तरह तैयार किया गया एक पूरा पेज चेज़ कहलाता था। रबर जैसी सतह वाली प्लेट के कारण कागज़ पर बिन्दु उभर जाते।

ब्रेल टाइपराइटर

लेकिन इन बिन्दुओं के काफी छोटा होने के कारण और इनका ऊपर नीचे हो जाने के कारण इन्हें छूकर पढ़ना मुश्किल होता। इसलिए एक की बजाए दो प्लेटों का इस्तेमाल किया जाने लगा। कागज़ भी खास होता। छपाई से पहले कागज़ को हलका-सा गीला कर दिया जाता ताकि छपाई के समय वह बिना फटे थोड़ा-सा फैल सके। सूखने के बाद कागज़ सिकुड़कर कड़ा भी हो जाता। इससे छूकर पढ़ना आसान हो गया।

उभरे बिन्दु या उभरे शब्द होने की वजह से कागज़ के दोनों ओर लिखना सम्भव न था। कुछ प्रकाशक दो उभरे हुए कागज़ों के पिछले हिस्सों को जोड़ देते। लेकिन इससे खास फायदा न होता। 1900 के आसपास अमरीका में ऐसी किताबें बनाई गईं जिसमें कागज़ के दोनों ओर बिन्दु उभारे जा सकें। 1860 के आसपास से ही ब्रेल के अलावा एक और लिपि चलन में आ गई थी। नाम था न्यू यॉर्क प्वाइंट। सालों तक ये दोनों चलन में रहीं। इस दौरान ब्रेल में भी कई बदलाव हुए।

1957 में अमरीकन प्रिंटिंग हाउस ने ब्रेल में छापने के लिए प्लेट इम्बॉसिंग डिवाइस बनाई। आज कम्प्यूटर से किसी भी लिखित सामग्री को ब्रेल में बदला और छापा जा सकता है। इसके अलावा ब्रेल टाइपराइटर, ब्रेल प्रिंटर और ब्रेल फोटोकॉपियर भी उपलब्ध हैं।

पुस्तक समीक्षा

ये सभी बहुत खास किताबें हैं। इनकी खासियत इनकी छपाई है। इनकी लिपि, इनके रखरखाव से लेकर इनका इस्तेमाल सब अलग है। ये हैं हिन्दी व अंग्रेज़ी में छप चुकी कुछ किताबों का ब्रेल संस्करण। शायद तुमने *बोस्की का पंचतंत्र, पाजी बादल, करडी कथा, बोस्की के कप्तान चाचा,* **Happy day**... को पढ़ा होगा। *बोस्की के कप्तान चाचा* तो दो महीने पहले ही ब्रेल में छपी है।

ब्रेल को पढ़ने का काम आँखों की बजाए उँगलियों के पोर करते हैं और लिखना पेंसिल की बजाए सूजे जैसे स्टाइलस से होता है। हिन्दी व अंग्रेज़ी दोनों की वर्णमालाओं के लिए कुछ खास चिन्ह होते हैं। स्टाइलस से कागज़ पर छेद किए जाते हैं। जिनके उभरे हुए हिस्सों को छूकर पढ़ा जाता है। इसी वजह से इसकी छपाई पन्ना दर पन्ना होती। छेद के उभारों को दबने से बचाने के लिए इन्हें सम्भाल कर रखना पड़ता है।

इन किताबों को आरूषि नाम की संस्था ने छापा है। यह संस्था पिछले बारह सालों से शारीरिक चुनौतियों का सामना कर रहे बच्चों की शिक्षा के लिए काम कर रही है। आरूषि का पता है -

1 शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र.

फोन - 5293399

काबायान और जादुई चिड़िया

पश्चिमी जावा द्वीप की लोक-कथाओं में काबायान एक प्रसिद्ध पात्र है। काबायान आलसी है। नींद उसको सदा घेरे रहती है। उसकी इस आदत से उसकी पत्नी ऐली को भी चिढ़ है और उसके माँ-बाप को भी। लेकिन काबायान है ईमानदार, भला, मज़ेदार। इसीलिए सभी उसको प्यार करते हैं। काबायान चतुर और हाज़िरजवाब भी है और कोई भी समस्या सुलझा सकता है।

एक दिन काबायान सोच में पड़ा एक कुर्सी पर बैठा था। ऐली ने सुबह पीने के लिए जो दिया था उसको उसने अब तक छुआ भी नहीं था। यह देखकर ऐली को हैरानी हुई। "सुबह-सुबह तुम्हें भी औरों की तरह धान के खेत में काम करना चाहिए। तुम किस सोच में पड़े हो? सचमुच, तुम्हारा व्यवहार बड़ा अजीब है।" ऐली ने कहा।

जम्हाई लेकर काबायान ने बेपरवाही से जवाब दिया, "मैं मुसीबत में हूँ। इसीलिए सोच में पड़ा हूँ।"

"किस चीज़ की चिंता है? गरीबी की? तकलीफ में दिन गुज़ारने की आदत नहीं पड़ गई?" ऐली ने पूछा।

"मैं गरीबी की बात नहीं सोच रहा हूँ। काबायान ने कहा, मैं वान आबूकोमार के बारे में सोच रहा हूँ। याद नहीं, हमने उससे सात हज़ार रुपए लिए थे और अब तक वापस नहीं किए? वान आबू दो बार आ चुका है। रुपयों के लिए आज वह फिर आएगा। पिछली बार उसने कहा था, अगली बार रुपए नहीं दिए तो तुम्हें कचहरी ले जाऊँगा।"

कचहरी का नाम सुनकर ऐली डर गई। उसको रोना आ गया। "क्या कहा? तुमको कचहरी ले जाएगा? तुमको सज़ा हो गई तो मेरा क्या होगा? कचहरी मत जाना, हाथ जोड़ती हूँ।"

"इसी कारण तो मैं इस समय इतना दुखी हूँ।"

"लेकिन चिंता करने से कर्ज़ तो नहीं चुका पाओगे। अच्छा होगा कि जाकर रुपयों का कुछ इंतज़ाम करो।" ऐली ने कहा।

"लेकिन कहाँ मिलेगा रुपया? मुझे सोचने दो। परेशान मत करो। मैं कर्ज़ चुकाने की कोई तरकीब सोच रहा हूँ। तुम रसोई में जाओ। तुम यहाँ खड़ी रहोगी, तो मेरे सोचने में बाधा होगी।"

ऐली रसोई में वापस चली गई, और काबायान फिर सोचने लगा। थोड़ी देर बाद वह ज़ोर से चिल्लाया और अपनी पत्नी को ढूँढने रसोई में पहुँचा। वह बिल्कुल पागलों जैसा व्यवहार कर रहा था।

"सुनो! मैंने बहुत बढ़िया तरकीब सोची है। खुशी मनाओ! हम आज ही अपना कर्ज़ चुका सकते हैं।" काबायान ने कहा।

"क्या करोगे!" ऐली ने पूछा।

"सवाल मत पूछो। शकरकंद के आटे से ढेर सारी लेई बनाओ।"

"क्या? लेई बनाओ?"

"हाँ, हाँ लेई! जल्दी। वान आबू के आने से पहले।"

ऐली उबलते पानी में शकरकंद का आटा मिलाकर लेई बनाने लगी। इस बीच काबायान ने अपना एक तकिया खोल डाला और उसमें भरे चिड़िया के पंखों को ज़मीन पर बिखेर दिया।

"लो, लेई तैयार है। अब इसका क्या करूँ?" ऐली ने आवाज़ दी।

टण्डी हो जाए तो मेरे सारे बदन, सिर से पाँव तक लेई चुपड़ दो।"

ऐली ने वैसा ही किया, यद्यपि उसको समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था। लेई ठण्डी हो गई तो उसने उसे काबायान के पूरे बदन पर चुपड़ दिया - उसके बालों की जड़ से लेकर पावों के नाखूनों तक। कोई हिस्सा बाकी नहीं रहा।

उसके बाद काबायान ज़मीन पर बिखरे चिड़िया के पँखों पर लोटने लगा। अब उसके पूरे शरीर पर पँख चिपक गए। उसका चेहरा तक ढँक गया। उसने ऐली से कहा, "अब मैं बकरी के बाड़े में जाता हूँ। जब वान आबू आए तो उससे कहना कि मैं राजा के पास जादुई चिड़िया बेचने गया हूँ।"

ऐली ने सिर हिला दिया। काबायान बाकी बातें समझाकर बाड़े में घुस गया।

थोड़ी देर बाद ही वान आबू आ गया।

"अस्सलाम वालेकुम" वान आबू ने कहा।

"वालेकुम अस्सलाम," ऐली ने जवाब दिया।

वान आबू ने पूछा, "काबायान कहाँ है? इस हफ्ते में मैं यह तीसरी बार आया हूँ। अपने रुपए के लिए। आज आखिरी दिन है। अगर काबायान ने कर्ज़ नहीं चुकाया तो मेरे पास कचहरी जाने के अलावा और कोई चारा नहीं।"

"लेकिन, वान आबू, वह तो घर में है नहीं।" ऐली ने कहा।

"तो वह घर में नहीं है? गया कहाँ?" वान आबू ने पूछा।

वह जादू की चिड़िया के बारे में राजा से बात करने गया हैं।"

"क्या कहा?" जादू की चिड़िया?

"हाँ, काबायान के पास जादू की चिड़िया है। उसे राजा खरीदना चाहते हैं।"

वान आबू सिर हिलाकर मुस्कुराया।

"अच्छा, अगर यह बात है तो मैं भी उस चिड़िया को देखना चाहूँगा। उसका पिंजड़ा कहाँ है?"

"वह पिंजड़े में है। लेकिन उसको देखना मत। कहीं उड़ गई तो मुझ पर दोष लगाया जाएगा।" ऐली ने कहा।

उसके लाख मना करने पर भी आबू चिड़िया को देखने की ज़िद पर अड़ा रहा।

"मुझको क्यों नहीं देखने दे रही हो? अगर पिंजड़े का दरवाज़ा बंद है तो चिड़िया कैसे उड़ जाएगी? चलो, दिखाओ जादू की चिड़िया। मैं सचमुच देखना चाहता हूँ।" आबू ने खुशामद की।

"नहीं, नहीं वान, मत देखना। काबायान मुझसे बहुत नाराज़ होगा।"

लेकिन वान आबू और ज़्यादा इंतज़ार नहीं कर सका। बाहर निकलकर इधर-उधर देखने लगा कि चिड़िया कहाँ है। वह बकरी के बाड़े की तरफ से गुज़रा तो एक विचित्र जीव को देखकर चौंक पड़ा। उसने जल्दी से आगे बढ़कर बाड़े का दरवाज़ा खोल दिया। परों से ढँका काबायान जल्दी से बाहर निकला और झाड़ियां में गायब हो गया।

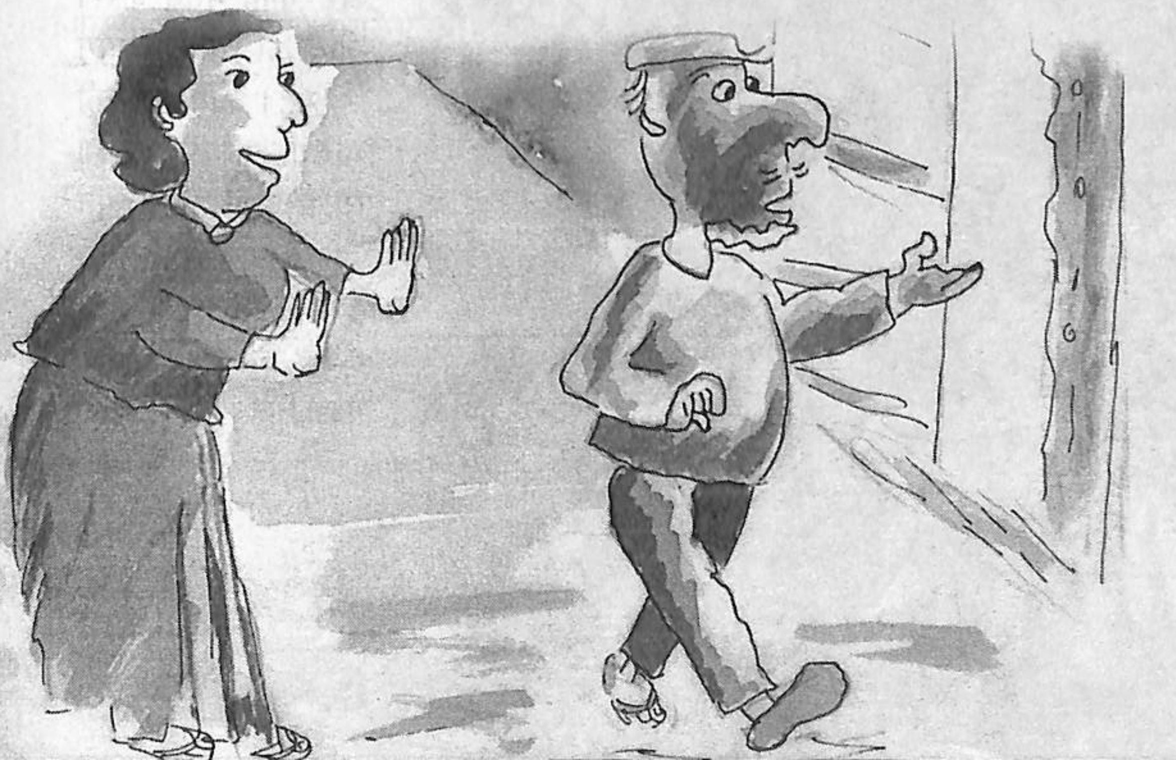

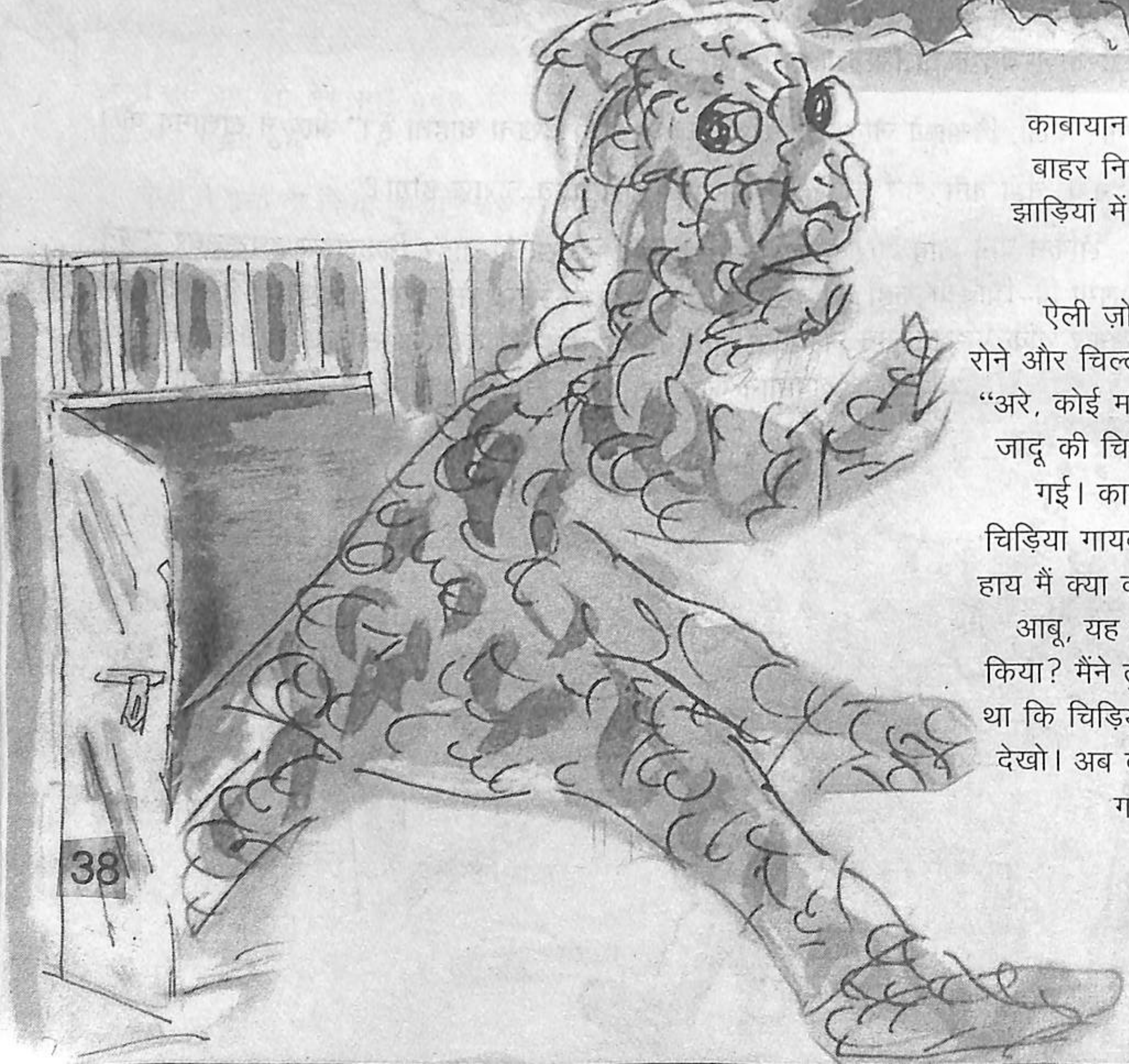

काबायान जल्दी से बाहर निकला और झाड़ियां में गायब हो गया।

ऐली ज़ोर-ज़ोर से रोने और चिल्लाने लगी, "अरे, कोई मदद करो। जादू की चिड़िया भाग गई। काबायान की चिड़िया गायब हो गई। हाय मैं क्या करूँ? वान आबू, यह तुमने क्या किया? मैंने तुमसे कहा था कि चिड़िया को मत देखो। अब वह निकल गई। हाय!"

“रोओ मत, रोओ मत चुप हो जाओ।” वान आबू उसको चुप कराने की कोशिश करने लगा। लेकिन ऐली रोती ही जा रही थी।

“सर्वनाश! अब राजा नाराज़ हो जाएगा। खैर... मैं राजा को बता दूँगी कि वान आबू ने चिड़िया को छोड़ दिया।” ऐली ज़ोर-ज़ोर से रोते हुए बोली।

राजा का सुनते ही वानआबू घबरा गया। बोला, “राजा से मत कहना कि मैंने चिड़िया को बाहर निकाल दिया। मैं माफी माँगता हूँ। मैंने गलती की जो चिड़िया को बाहर निकलने दिया। हरज़ाने के तौर पर, मैं समझूँगा कि काबायान का कर्ज़ चुक गया है। लेकिन ईश्वर के लिए, राजा से मत कहना कि चिड़िया को मैंने आज़ाद किया।” वान आबू गिड़गिड़ाया।

“राजा को मैं बता दूँगी। वह दस हज़ार रुपए की चिड़िया खरीदना चाहते थे। काफी ऊँचे दाम हैं ये।” ऐली ने कहा।

वान आबू ने फौरन कहा, “अच्छी बात है। मैं तीन हज़ार और जोड़ दूँगा। काबायान से मुझको सात हज़ार मिलने थे न? तीन और मिलाकर पूरे दस हज़ार हो गए न? उतना ही हुआ जितना राजा तुमको चिड़िया के लिए देते।”

फिर वान आबू ने ऐली को तीन हज़ार रुपए दिए। रुपए लेकर उसने रोना बंद कर दिया। वान आबू घर वापस चला गया।

काबायान बाग में पेड़ों के झुरमुट में छिपा बैठा था। वान आबू के जाते ही वह बाहर निकला और घर के अंदर आ गया।

ऐली ने खुशी-खुशी कहा, हमारा कर्ज़ उतर गया। ऊपर से तीन हज़ार रूपए का मुनाफा हुआ। काबायान भी जी खोलकर हँसा।

"मैं कितना भाग्यशाली हूँ कि मेरी बीबी इतनी चतुर है। तुम और मैं मिलकर सारी दुनिया को बेवकूफ बना सकते हैं।"

- सभी चित्र : संतोष श्रीवास्तव

श्रवण कुमार मीणा, जूनापानी, देवास, म.प्र.

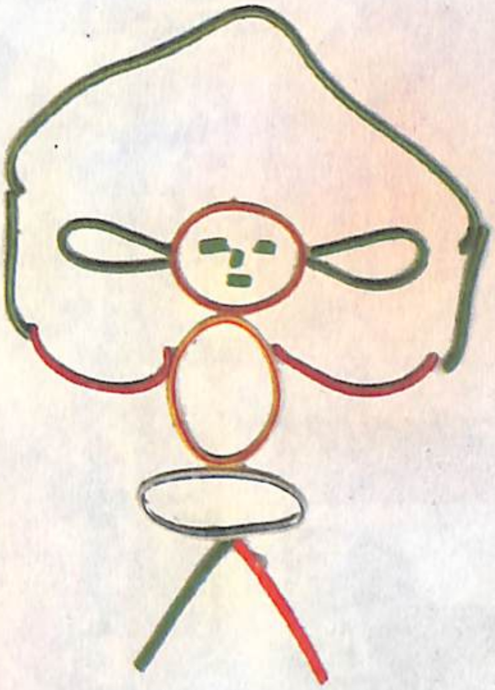

गंभीर मीणा, पलासी, देवास, म.प्र.

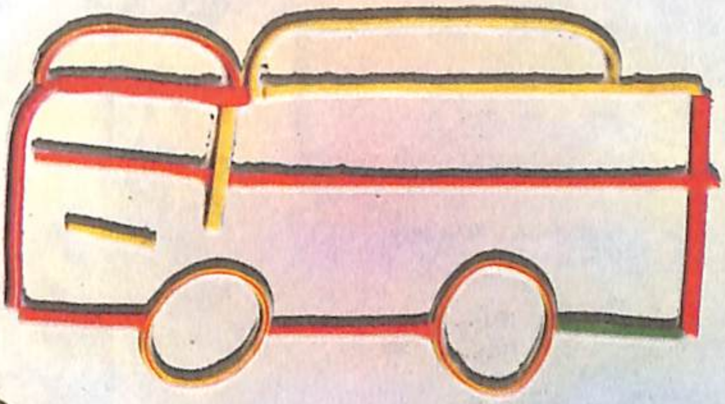

रफीक खान, हरणगाँव, देवास, म.प्र.

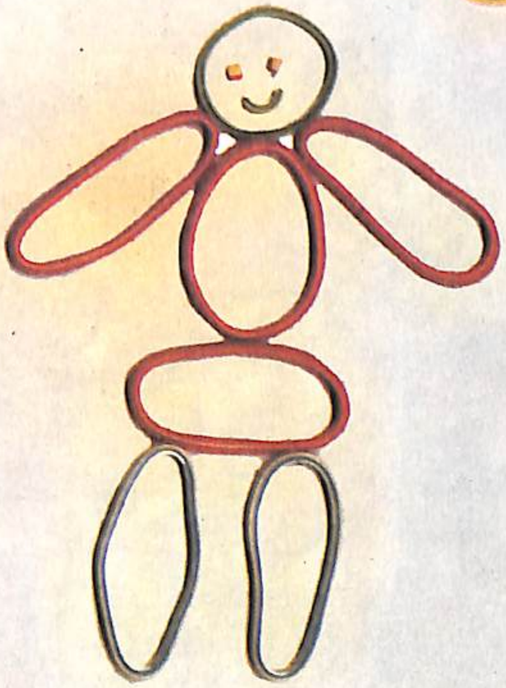

रफीक खान, हरणगाँव, देवास, म.प्र.

इकबाल शाह, हरणगाँव, देवास, म.प्र.

चकमक पंजीयन क्रमांक 50309/85 के अंतर्गत भारत के समाचार पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत। डाक पंजीयन क्रमांक म.प्र. /261/भोपाल/2003-05

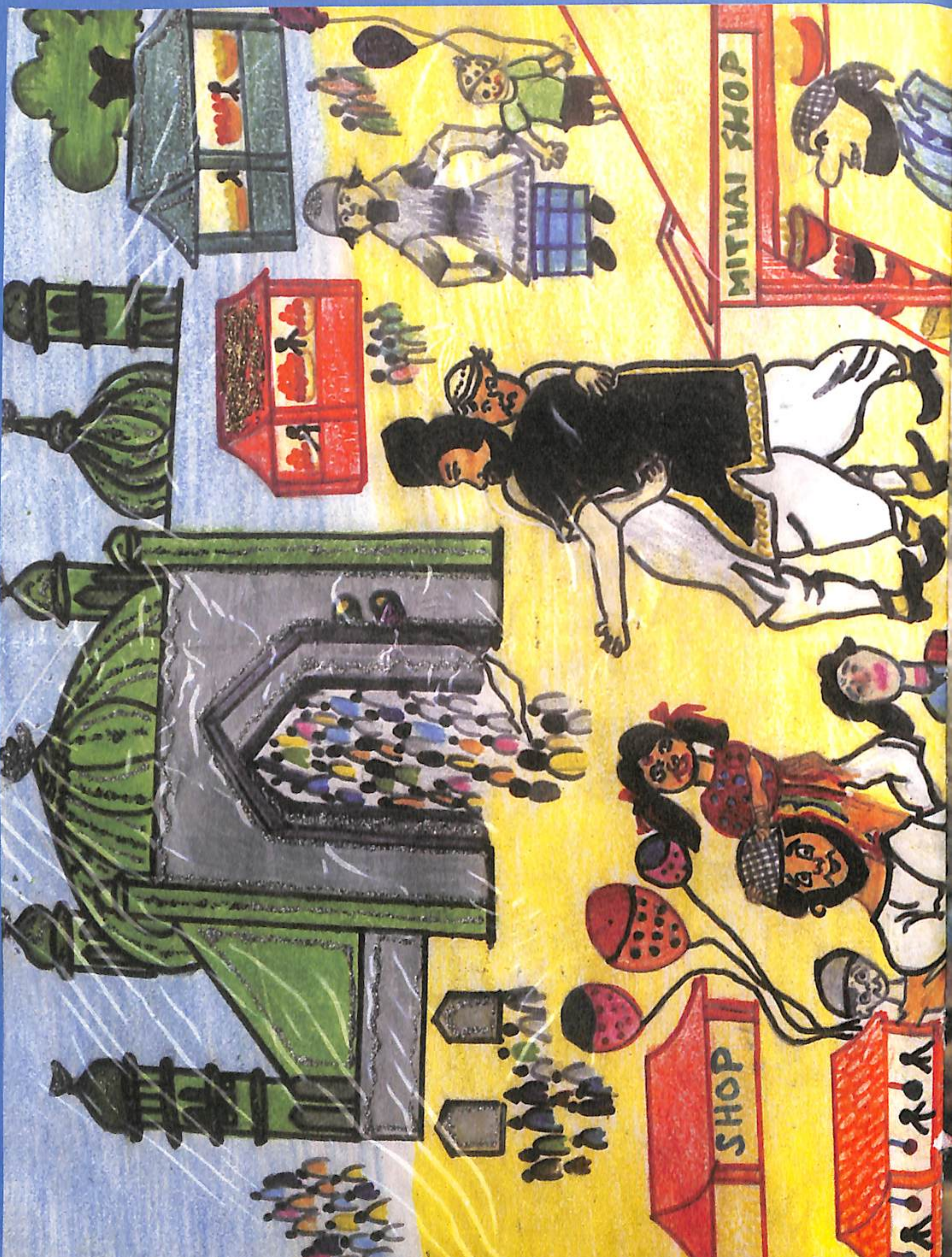

फरीदा हुसैन, छठवीं, फैज़ाबाद, उ.प्र.

रैक्स डी. रोज़ारियो की ओर से विनोद रायना द्वारा राजकमल प्रिंटर्स से मुद्रित एवं एकलव्य, ई-7/एच.आई.जी. 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल-16 से प्रकाशित। संपादक : विनोद रायना